संवादसेतु

मीडिया का आत्मावलोकन

अंक : 12 पृष्ठ : 20 मार्च–अप्रैल 2013 नई दिल्ली

संवादसेतु

संपादक
आशुतोष

सह-संपादक
जयप्रकाश सिंह

उपसंपादक
सूर्यप्रकाश

कार्यालय
प्रेरणा, सी-56/20
सेक्टर - 62, नोएडा

अनुरोध

संवादसेतु की इस पहल पर आपकी टिप्पणी एवं सुझावों का स्वागत है। अपनी टिप्पणी एवं सुझाव कृपया उपरोक्त ई-मेल पर अवश्य भेजें।

"संवादसेतु" मीडिया सरोकारों से जुड़े पत्रकारों की रचनात्मक पहल है। "संवादसेतु" अपने लेखकों तथा विषय की स्पष्टता के लिए इंटरनेट से ली गई सामग्री के रचनाकारों का भी आभार व्यक्त करता है। इसमें सभी पद अवैतनिक हैं।

अनुक्रमणिका

संपादकीय ----------03

आवरण कथा
संवाद ही सच्चा समुद्र मंथन ----------04

परिप्रेक्ष्य
मंगलसंवाद का अमृतकलश ----------06

साक्षात्कार
कार्पोरेट जगत के कारण सरकार पर निर्भरता कम हुई है ----------08

मुद्दा
खलनायक नहीं, नायक है तू ----------10

संस्मरण
साहित्यिक पत्रकारिता के 'अमृत' विद्यानिवास----------12

न्यू मीडिया
फेसबुक के नौ वर्ष ----------14

अंतर्राष्ट्रीय मीडिया
आस्था नहीं, आश्चर्य का कुंभ----------15

परिचर्चा
क्या राजनीतिक हस्तक्षेप से सोशल मीडिया की स्वाभाविकता प्रभावित होगी? ----------17

गतिविधि ----------18]19]20

संपादकीय

संवादसेतु का यह अंक अल्पविराम के बाद आपके समक्ष है। मिशनरी मीडिया की आज भी यह नियति है। यही इसकी शक्ति भी है। जिन लोगों का इसे प्रारंभ करने में प्रारंभिक प्रयास था, उनके अपनी समस्याओं में उलझने के कारण इसके कुछ अंक प्रकाशित न हो सके। इसका श्रेय सुधी पाठकों को जाता है कि उन्होंने न केवल टोकना जारी रखा बल्कि संवादसेतु के पुनः प्रकाशन हेतु प्रेरित किया। परिणाम है कि नवोदित पत्रकारों की टोली नए सहयोगियों, नई ऊर्जा तथा नए संकल्प के साथ संवाद से युक्त यह संयुक्तांक पुनः आपके सामने है।

बीते कुछ महीनों में मीडिया जगत यथावत ही चला है। वही खबरों की खींच–तान, वहीं बयानों पर छिड़ी रार और वही प्रेस काउंसिल अध्यक्ष काटजू का बड़बोलापन। प्रेस क्लब के चुनाव में वही पैनल दोबारा चुन लिया गया जो पिछली बार भी जीता था। मीडिया सक्रियता की बात करें तो वह दो मुद्दों पर खास तौर पर दिखाई दी। पहली संजय दत्त की सजा पर और दूसरी नरेंद्र मोदी के मामले में मीडिया के यू–टर्न पर। कुछ समय पहले तक मीडिया की आंखों की किरकिरी रहे नरेंद्र मोदी संभावित केंद्रीय भूमिका के चलते कथित नेशनल मीडिया के दुलारे बन गए हैं।

प्रयाग का महाकुंभ इस बार काफी 'मीडिया फ्रेंडली' रहा। उमड़ती भीड के बीच भी प्रशासन ने मीडिया की सुविधाओं का खास ख्याल रखा। विदेशी मीडिया भी कुंभ में काफी जुटा किंतु उनकी रिपोर्टिंग सतही ज्यादा नजर आई। उसकी खास रुचि स्नान करती महिलाओं और नागा संन्यासियों में अधिक रही है। वही दृश्य उनके फोटो–फीचर का विशेष आकर्षण हमेशा रहते हैं। इस बार की रिपोर्टिंग में कुंभ की समीक्षा बाजार के रूप में भी काफी की गई। कुंभ की व्यवस्थाओं पर होने वाले खर्चे और उसमें होने वाली बिक्री के गणित जुटाने के लिए पत्रकारों ने पिछले डेढ़ सौ वर्षों के सरकारी खाते खंगाल डाले।

इस सब से अलग, बहुत छोटे स्तर पर पत्रकारिता के विद्यार्थियों के गुण–संवर्द्धन हेतु कुछ गतिविधियां भी आयोजित हुईं। प्रभावी शीर्षक लेखन पर प्रेरणा, नोएडा में कार्यशाला का आयोजन किया गया तो दिल्ली मे माखनलाल चतुर्वेदी विश्वविद्यालय ने मीडिया शोध पर दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया। इसी बीच दिल्ली में पत्रकारों द्वारा प्रतिवर्ष वसंत पंचमी पर आयोजित होने वाले सरस्वती पूजन का भव्य आयोजन हुआ तो प्रेरणा में पत्रकारों का होली मिलन समारोह। दोनों ही कार्यक्रमों में बड़ी संख्या में पत्रकार उपस्थित थे। इनका संक्षिप्त विवरण इस अंक में समाविष्ट है।

संवादसेतु के इस अंक के कलेवर और विषयवस्तु पर आपकी टिप्पणी तथा आगामी अंक के लिए आपकी रचनाओं की प्रतीक्षा रहेगी।

भारतीय नववर्ष की हार्दिक शुभकामना सहित,

आपका
आशुतोष

संवाद ही सच्चा समुद्र मंथन

राजेन्द्र सिंह

कुंभ में राजा, प्रजा और संतों की सृजनात्मक "शक्तियां मिलकर ज्ञानामृत की खोज करती थीं। वर्तमान में कुंभ का यह कार्य विस्मृत हो गया है। अब तो कुंभ दिखावा मात्र रह गया है। सरकारें अपना बड़प्पन दिखाने, बताने हेतु बहुत बड़ा बजट सड़क, रोशनी, शामियानों, इत्यादि पर खर्च करती है। कुंभ का संपूर्ण प्रबंधन ठेकेदार करते हैं, जिनमें भावना एवं दर्शन का अभाव रहता है। उनका तो कुंभ से आर्थिक लाभ पाना ही एकमात्र उद्देश्य रहता है। संतो का ' शाही स्नान' और 'पेशवाई' का भारी दिखावा होता है। इसमें तो न धर्म का दर्शन होता है, और न ही प्रतिबद्धता और समर्पण झलकता है। बस दिखावा और शुद्ध दिखावा ही नजर आता है। इस दिखावे के लिए दुनिया की सबसे पुरानी और सबसे बड़ी भीड़ का बिना बुलाए संगम पर एकत्रित होना अब साध्य विहीन साधनों और साधना की बरबादी का 'कुंभ' बना दिखता है। क्या यह कुंभ अपने परंपरागत साध्य को पाने वाली साधना से साधन बरबादी को रोककर सिद्धि प्राप्त कर सकता हैं ? हां! कर सकता है! 'संवाद' ही सच्चा समुद्र मंथन बनकर सिद्धि को प्राप्त करने में सहायक हो सकता है।

इक्कीसवीं सदी में कुंभ के अवसर पर राज–समाज और संतों को मिलकर विचार मंथन करना चाहिए। अभी कुंभ सिर्फ गंगा स्नान बनकर रह गया है। यहां समाज और सृष्टि की समृद्धि का वैचारिक मंथन नही होता है। ये विषय कुंभ में आने वालों के लिए अछूते हैं। सभी का कुंभ के इस महत्वपूर्ण अवसर से अवगत होना एवं इस वैचारिक मंथन में प्रतिभागी होना आवश्यक है। कुंभ केवल सभी को 'लाभ' कमाने का अवसर मात्र है। पुण्य करने वाले 'शुभ' कार्यों का अवसर अब कुंभ नहीं रह गया है। क्या आगे आने वाले कुंभ को सभी के लिए सुअवसर बना सकते है? हाँ! कुंभ में मिल कर अपनी बुराई और कमियों की खोज करें। उन्हें अपने से अलग करें। बुराई और अच्छाई को अलग–अलग करना ही 'जहर से अमृत' को बचाकर रखना है। जीवन को अमृतमयी बनाना है, देवतुल्य बनाना है।

अमृत में जहर घोलने वाले 'राक्षस' बन जाते है। अगला कुंभ देवता बनाने तथा राक्षसों पर विजय दिलाने वाला बनाने हेतु वैचारिक मंथन और संवाद करने वाला मंच बने। सत्कर्म करने की प्रेरणा हमारे मन में सृजित हो, कुंभ सदाचार और सत्कर्म की स्थली बने, यह संकल्प अभी से हमारे राज–समाज और संतों को करना होगा। तभी कुंभ में सच्चा संवाद होगा।

जब हम आत्ममंथन एवं आत्मालोचना में जुटेंगे तब ही हमें कुंभ की महत्ता तथा अपनी कमियों का पता चलेगा। हमें कुंभ की कमियों को दूर करने हेतु प्रतिबद्धता की मजबूती, अपने अंतर्मन के अहसास से मिलेगी। जब हमारा मन मजबूत होकर अच्छे रास्ते पर चलने के संकल्पबद्ध होगा,तभी उसे अपने साध्य सिद्धि का आभास मिलेगा। ऐसी दशा में कुंभ हमें सहकर्म का अहसास कराके सदाचारी बनाएगा। सदाचार ही हमारी साधना को सिद्धि का आभास कराएगा। बस इसी परिवर्तन की प्रक्रिया में विश्वास रखकर हम कुंभ आयोजित करें। आप अगले कुंभ में पुण्य कमाने की इच्छा लेकर आएंगें, तभी कुंभ में सवांद के अवसर सृजित होंगे।

राजेन्द्र सिंह को सामुदायिक नेतृत्व के लिए मैग्सेसे पुरस्कार से नवाजा जा चुका है।

राजा–प्रजा एवं ऋषियों का वैचारिक मंथन ही कुंभ में होता है। यह संवाद राक्षसों को रोकने तथा ऋषियों के पुण्य बढ़ाने का पराक्रमी–प्रतापी अवसर बनता है। वैचारिक मंथन से ही सर्वसम्मत निर्णय होते हैं, जिन्हें सभी मानते हैं। अब सर्वसम्मत निर्णय नहीं होते अतः उन्हें सब नहीं मानते। कुंभ में पहले सर्वमान्य निर्णय लिए जाते थे। आज थोड़ी सी राक्षसी ताकतें अपने पक्ष में निर्णय करा लेती है। ऋषियों के निष्क्रिय होने से राक्षस सक्रिय हुए बिना ही धोखा देकर चोरी से निर्णय करके सबको लूटने–धोखा देने वाला काम लेते हैं। इन सब जहरीली, विनाशकारी घटनाओं पर कोई संवाद कुंभ 2013 में नहीं हुआ है। पांच दिन की गंगा संसद में जरूर संवाद हुआ, संकल्प भी लिया गया। निर्णय पूरे कुंभ में बंटे रहे। ये कुंभ के सर्वसम्मत निर्णय नहीं माने जा सकते है।

ऋषियों का ऋषि तत्व समझौता नहीं करता। राक्षसों का राक्षसी तत्व अपनी लालची–लोभी महत्वाकांक्षा पूरी करने हेतु संगठित हो कर धोखा देने में जुट जाता है। ये लाभ पाने के लिए सभी तरह के समझौते करते हैं। यह प्रक्रिया अब कुंभ में ज्यादा दिखाई दे रही है। सबसे पहले 2003 में नासिक, गोदावरी नदी के किनारे कुंभ में नदी की सेहत, समाज और सृष्टि की सेहत पर तरुण भारत संघ व जलबिरादरी ने मिलकर चर्चा चलाई थी। फिर 2006 में सिंहस्थ, क्षिप्रा किनारे जल संसद में यह बात बहुत जोर से उठी थी। जल जीवन है। इसमें जहरीला गंदा जल मिलाना अपराध और पाप है। इस पाप कर्म को रोकना जरूरी है। 2010 में हरिद्वार मायापुरी में एक छोटी पुस्तिका, 'सिर्फ स्नान नहीं है कुंभ' छपी, लाखों की संख्या में बँटी, कई संस्थाओं ने इसे छपवाकर भी बाँटा था।

पुस्तक के बाद अच्छी बहस हरिद्वार कुंभ 2010 में नहीं हुई। इस पुस्तिका ने इस बार प्रयाग कुंभ में कई ऋषियों को गंगा और समाज संबंधों को सुधारने व गंगा से अच्छे संस्कार और व्यवहार की प्रेरणा लेने का आहवान तो किया था, लेकिन संवाद करके काम करने वाला मंथन कुंभ नही बना।

सरकारी भ्रष्टाचार को रोककर सदाचार बढ़ाने वाले तंत्र की जरूरत का अहसास कुंभ में नही है, कुंभ में पुण्य कर्म करने वाले ही गंगा स्नान के हकदार है। यह बात भी नही उठी है कि सिर्फ स्नान करके पाप धोने की चाह रखने वालो को कुंभ में नही आना चाहिए। ”हमारे भ्रष्ट आचरण ने हमे भ्रष्ट कर्मकांड करने सिखा दिए हैं। उन भ्रष्ट कर्मकांड़ों को छुडवाने तथा सदाचारी कर्मकाण्ड़ की रीति–नीति तय करने के लिए 'कुंभ' संवाद का सबसे उत्तम अवसर है। इसी अवसर पर हम जीवनमय अच्छाईयों को पुनर्जीवित कर सकते है तथा समता–सादगी को जीवन में अपनाने का संकल्प ले सकते हैं।

कुंभ में आए संत अपनी ऊंचाई दिखाने में जुटे मिलते हैं। सभी परंपराओं का सम्मान करते हुए यह कहना पडता है कि आज प्रकृति–सृष्टि और समाज के लिए जो अनुकूल हैं वैसा ही कर्मकांड करने वाला भी कोई अखाडा और संत दिखाई नही दिया। 'कर्मकाण्ड' किसी दूसरे को दिखाकर अपनी लालची स्वार्थसिद्धि हेतु नहीं बल्कि साझे भविष्य को संवारने हेतु किए जाने चाहिए। कुंभ 2013 में हमने गंगा के प्रिय पांच वृक्ष, कदम, बरगद, पीपल, गूलर एवं आंवला रोपण के साथ मिट्टी के कुंभ को गंगाजल से भर कर उनके साथ रखा है। यह पूर्व में ही सवांद करके तय किया था। कुंभ स्थापना के इस कर्मकाण्ड़ में आज के जल संकट के समाधान का दर्शन है। कुंभ में आने वाले संत अपनी समय, ”शक्ति, साधन सभी कुछ लगा कर महामण्डलेश्वर, आचार्य, आदि उपाधियां पाने की होड़ में लगे रहते हैं। कुछ संत तो बड़े राष्ट्रीय और राज्य नेताओं को बुलाने में जुटे रहते हैं। राज्यपाल, मुख्यमंत्री, प्रधानमंत्री, सांसदों–विधायकों की चापलूसी में संत जुटे रहते हैं। नेता भी संतों के चरण छूकर बड़े बनने से नहीं चूकते। बस कुंभ तो एक दूसरे को बड़ा बनाने का अच्छा अवसर बन गया है।

'मैं तेरे लिए तू मेरे लिए' करने में हाथ की सफाई दिखाने का सुन्दर अवसर कुंभ बनता जा रहा है। सच्चाई स्थापित नही करने तथा समाज और सृष्टि की हिंसा को नही रोकने वाला कुंभ बन गया है। कुंभ में हिंसक सम्मान पा रहे हैं। अहिंसा और सत्य के लिए जीने वाले मर रहे हैं। प्रों.जी.डी. अग्रवाल (स्वामी सानन्द) ने ठीक कराने की मांग के साथ आमरण अनशन किया। कुंभ में उनकी गंगा तपस्या की चर्चा भी नही हुई। उन्होंने कहा जब तक मेरी मां गंगाजी की सेहत ठीक नही होगी, तब तक मुझे कुंभ में जाकर दिखावटी बातें करने का अधिकार नहीं है। मैं तो अपनी मां की सेहत ठीक करने हेतु दूर अमरकंटक में बैठकर ही तपस्या करूंगा। मेरा कुंभ तो गंगा के सेहत को सुधारने हेतु गंगा तपस्या करना है। गंगा की सेहत सुधार कर ही कुंभ में स्नान करने का हकदार बनूंगा। कुंभ में तो गंगा की सेहत ठीक करने और पवित्र रखने वाले ही स्नान के हकदार होते हैं। कुंभ पुण्य पाने की घड़ी हैं। पुण्य पाने योग्य काम करके ही कुंभ में जाया करते हैं। कुंभ में पुण्य कमाने वाले लोग अब घट रहे है। गंगा जी में स्नान करके पाप धोने वाले बढ़ रहे हैं। कुंभ अब पाप धोने वालों का रणक्षेत्र बन गया हैं। पुण्य कमाने वालों का नही रहा है। इसी लिए इस समय यहां अच्छा चिंतन–मनन अथवा वैचारिक मंथन के जरिए अमृत नही निकलता है। अमृत निकालने वाला संवाद कुंभ में अब नही होता सिर्फ गंगा स्नान करके हम अपने ”शरीर का जहर ही निकालते हैं। कुंभ अब जहर बढाने वाला अवसर बनता जा रहा है।

सन् 2014 में गोदावरी किनारे नासिक में तथा 2016 में क्षिप्रा किनारे उज्जैन में आयोजित कुंभ में वैचारिक मंथन के कुछ अवसर बन सकते हैं ? यहाँ से अमृत कलश निकले। उस का पान करने वाले देवता बनकर समाज को सदाचारी बनाने वाले 'संवाद' का सृजन करें तभी कुंभ आयोजन सार्थक होगा। इस कार्य हेतु स्वयं की आहूति देने वाले आगे आएं, गंगा को गंगामृतवाहिनी बनाने वाला कार्य तेज करें। ऐसे छोटे काम ही बड़े कुंभ हेतु अच्छा रास्ता खोजेंगे। हम समुद्र की एक बूंद या बड़े पेड़ की एक पत्ती बनकर तो देखें।

वसंत तो नई पत्तियो को जन्म देकर हरियाली लाता है। बड़े–बड़े पुराने पेड़ों की पुरानी पत्तियां हटने के बाद ही नई पत्तियां जन्मती हैं। हम एक पुराने पेड़ की नई पत्ती हैं। कुंभ एक गहरा समुद्र और पुराना बड़ा पेड़ है। इसे राक्षस और देवता सभी अपनी तरफ खींचने में जुटे हैं। देवता संख्या में कम और कमजोर तो थे परन्तु अपनी सहजता और सरलता की साधना से साध्य सिद्धि प्राप्त करते थे। ज्ञानामृत का कलश उन्हें ही मिलता था।

हम भी कम है, कमजोर हैं। सरल, सहज, सादे लोग ही साधना वाली एक रस्सी बन सकते हैं। ज्ञानामृत पाना हमारा भी साध्य है। जिसमें, प्रदूषण, ”शोषण और अतिक्रमण नहीं हैं। प्रकृति प्रेम, निष्ठा, सत्य और अहिंसा का रास्ता हमारी जीवन पद्धति है। ये रास्ते कांटो से भरे हैं और इन पर चलना बहुत मुश्किल, लेकिन अमृतमय है।

अब जीवन में जहर भरने, नदियों और भूजल में प्रदूषण करने वालो को कैसे रोकें ? धरती का पेट पानी से भरकर नदियों को कैसे पुनर्जीवित करें ? गरीब को भी भर पेट रोटी और पानी मिले। वे भी सम्मान सहित जीवन जी सके। ऐसे सवालों पर वैचारिक मंथन और संवादहेतु कुंभ आयोजित होने चाहिए। कुभ के नवआयोजनों में हमें ऐसा संवाद ”शुरू करना चाहिए। ■

मंगलसंवाद का अमृतकलश

जयप्रकाश सिंह

सत्यव्रतियों के लिए भारतीय संस्कृति का घोष वाक्य 'वादे वादे जायते तत्वबोध' है। संवाद से ही सत्य की उपलब्धि होती है। आप अध्यात्म के सूत्रों की पहचान करना चाहते हैं अथवा एक बेहतर व्यवस्था का निर्माण करना चाहते हैं, इसके लिए संवाद से बढ़कर कोई मानवीय और समग्र तरीका नहीं हो सकता। संवाद की अवधारणा के आधार पर ही लोकतांत्रिक मूल्य पनपते हैं और लोकतांत्रिक लोकमानस भी बनता है। किसी भी समस्या से जुड़े सभी पक्षों की पहचान और समाधान के लिए अधिकतम् सुझाव, संवाद की प्रक्रिया के द्वारा ही प्राप्त हो सकते हैं।

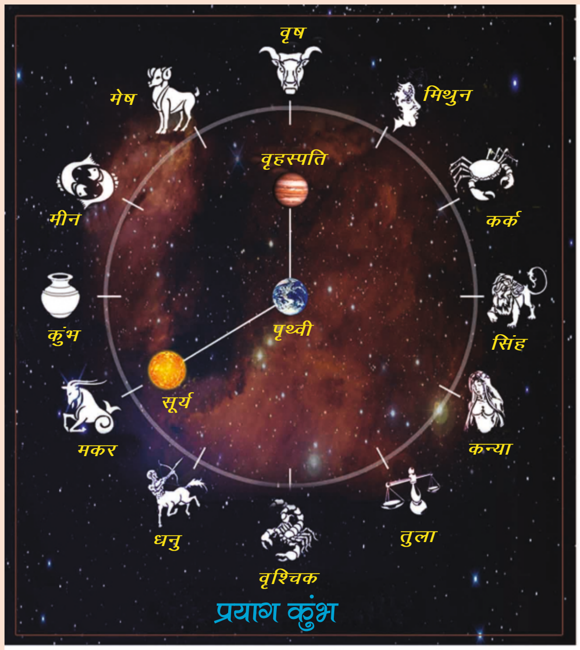

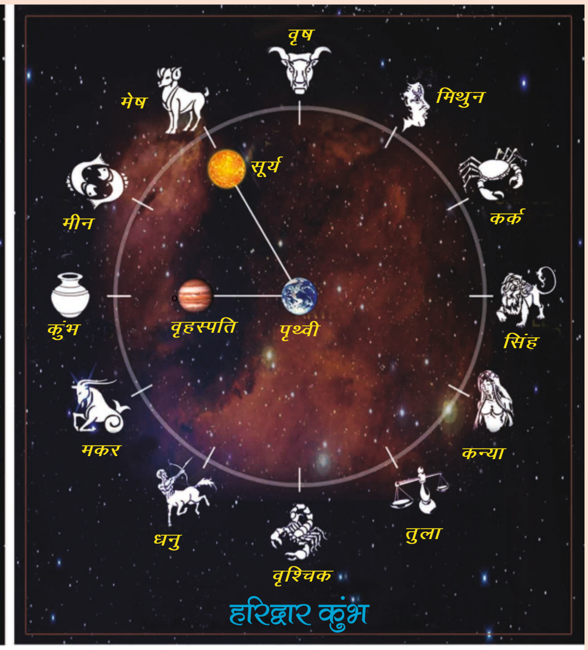

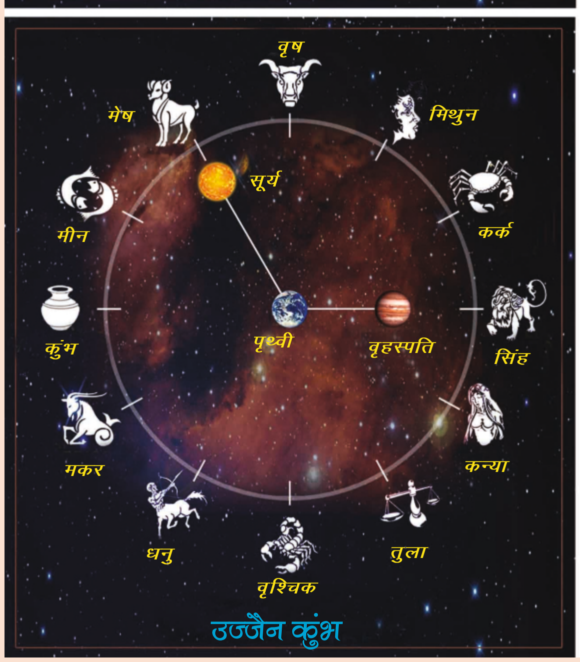

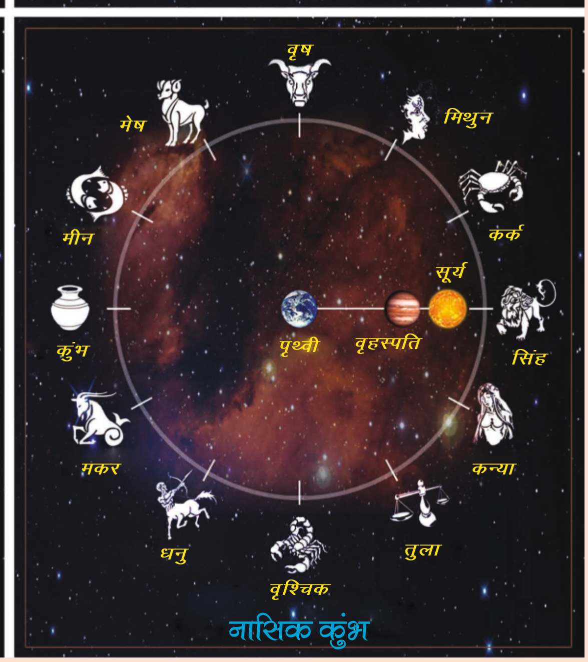

संवाद की अतिशय महत्ता को ध्यान में रखकर ही शायद इसे धार्मिक पवित्रता की परिधि में प्रस्तुत किया जाता है। किसी के मत को खत्म करने के लिए शस्त्र उठाने की परंपरा हमारे यहां कभी भी नहीं रही। संवाद के ही एक अपेक्षाकृत अधिक परिष्कृत रूप–शास्त्रार्थ के जरिए हमने असत्य धारणाओं का खंडन किया, मिथ्याचारी लोगों को जमींदोज किया। अद्वैत का परचम लहराने के लिए शंकराचार्य ने किसी विरोधी का सिर उसके धड़ से अलग नहीं किया था। सनातन परंपरा के सामने खड़ी तमाम चुनौतियों को ध्वस्त करने के लिए उन्होंने शास्त्रार्थ का सहारा लिया। शास्त्रार्थ के जरिए ही उन्होंने भारतीय सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन को अमृत की कुछ बूंदे पिलाईं और सभी विजातीय तत्वों से लडने के योग्य बनाया।

अब यहां पर एक प्रश्न का उठना बहुत स्वाभाविक है। वह यह कि क्या भारत में संवाद की प्रक्रिया को सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश में स्थापित करने के लिए कुछ प्रयास किए गए अथवा नहीं। दुनिया के अधिकांश हिस्सों में यह देखा गया है कि बौद्धिक जगत और आमजगत के मूल्यों में काफी भिन्नता होती है। यह भिन्नता राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्रों के अलावा सांस्कृतिक संदर्भों में भी देखने को मिलती है। एक ही समाज के इन दो घटकों में मूल्यों और मान्यताओं का एक स्पष्ट विभाजन सर्वत्र स्वयमेव दिखाई पड़ जाता है।

संवाद की प्रक्रिया के प्रति भारतीय आस्था की पड़ताल के लिए बौद्धिक परिवेश और आम समाज के बीच उपस्थित संवादसेतु की पहचान आवश्यक है। संवाद के विचार के संस्थानीकरण के लिए किए गए प्रयासों को चिन्हित करना होगा। संवाद के ऐसे वृहद्तर प्लेटफार्म के मूल स्वरूप को पहचानना होगा जहां पर व्यवस्था के सभी घटक एकत्रित होकर संवाद करते रहे हैं।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया के बाद व्यवस्थागत घटकों के

एकत्रीकरण का प्रश्न और महत्वपूर्ण हो गया है। इस प्रक्रिया के कारण राज और समाज के बीच की खाईं अधिक चौड़ी हो गई है। समाज आज भी परंपराओं की गठरी को लादे सहज और स्वाभाविक दिशा में चलने के प्रति आस्थावान है और सांस्कृतिक दृष्टि से निरक्षर नीति–नियंता उसे स्ट्रक्चरल एडजस्टमेंट प्रोग्राम के तहत आयातित होने वाली नीतियों के खांचे में फिट करना

चाहते हैं। दुर्भाग्य यह है कि इन दोनों पक्षों के बीच संवाद स्थापित करने के परंपरागत प्लेटफार्म समाप्त हो गए है और ऐसे नए प्लेटफार्म का सृजन नहीं हो पा रहा है जहां राज और समाज एक दूसरे से संवाद स्थापित कर सकें। किसी रामकथा, किसी धार्मिक आयोजन अथवा पारंपरिक आयोजनों में ये दोनों पक्ष सहभागी तो होते हैं लेकिन उनका समागम नहीं हो पाता। दरी और कुर्सी का फर्क साफ देखा जा सकता है। कुर्सी और दरी के भाव अलग होते हैं। भाषाएं अलग होती हैं और इसी कारण दोनों के बीच संवाद की संभावनाओं का सृजन नहीं हो पाता। इसके कारण व्यवस्था के घटकों के बीच एक कम्युनिकेशन गैप की स्थिति बन गई है।

संवादहीनता की इस स्थिति में कुंभ जैसे आयोजनों के मूलभाव को पुनरूज्जीवित किया जाना बहुत आवश्यक हो जाता है क्योंकि कुंभ व्यवस्थागत घटकों के बीच संवाद का एक वृहद पारंपरिक प्लेटफार्म रहा है। इस बिंदु पर कुंभ के मूलस्वरूप को लेकर प्रश्न उठना स्वाभाविक है। साथ ही इस बिंदु पर विचार किया जाना आवश्यक हो जाता है कि क्या कुभ के मूलस्वरूप को आज भी ज्यों का त्यों अपनाया जा सकता है या नहीं। यदि नहीं तो कुंभ मूलभाव को अक्षत बनाए रखते हुए उसके स्वरूप को समसामयिक कैसे किया जा सकता है?

पौराणिक कहानियों के अनुसार कुंभ के आयोजन का संबंध समुद्र मंथन की प्रक्रिया से उत्पन्न अमृतकलश से है। समुद्र मंथन के कारण जिन चौदह रत्नों की समुद्र से उत्पत्ति होती है,उसमें अमृतकलश भी शामिल था। अमृतकलश पर आधिपत्य जमाने के लिए जो भागदौड़ और एक दूसरे को छकाने को खेल शुरू हुआ,उसके कारण कुछ बूंदे जमीन पर छलक पड़ी थीं। जहां–जहां पर ये अमृत बूंदे छलकी थीं वहां–वहां पर कुंभ के आयोजन होने लगे। समुद्र मंथन की प्रक्रिया में अपने परंपरागत मतभेदों को भुलाकर देव और दानवों ने सहभागिता की थी और इनसे उपजे रत्नों में हलाहल विष भी शामिल था। यदि समुद्र मंथन की प्रक्रिया को एक मिथक मानकर, संवाद और व्यवस्था के संदर्भों में हम इसकी व्याख्या करें तो इसके कई पुरातन और सनातन अर्थ निकल सकते हैं।

समुद्र मंथन की प्रक्रिया हमारे सामने दो असुविधाजनक तथ्यों को उजागर करती है। पहला यह कि संवाद एकरस नहीं होता। एक ही मान्यताओं को मानने वाले लोगों के बीच संवाद से अधिक समर्थन होता है। संवाद की प्रक्रिया अधिक कष्टसाध्य होती है। यह अपने अहं और मूढ़ता को दरकिनार करते हुए दूसरे को समझने और सहने की प्रक्रिया है। दूसरा यह कि एकरसीय संवाद प्रक्रिया के परिणाम भी बहुत सीमित दायरे में रहते हैं। विरोधाभास व्यक्ति को एक व्यापक फलक पर आरूढ़ करते हैं और विरोधाभासों की उपस्थिति में संवाद के जरिए सत्य के वृहत्तर आयामों को साधने की कोशिश की जाती है। इन वृहत्तर आयामों के साधने की प्रक्रिया में कई बार बहुत कुछ अशुभ भी घटित होता है। समुद्र मंथन की प्रक्रिया में देव–दानव दोनों का शामिल होना और अमृत के साथ हलाहल की उत्पत्ति संवाद के इसी मूलचरित्र की तरफ संकेत करती है।

अमृत और अमरता का भी कुंभ से गहरा संबंध है। साधारणतया अमृत से एक ऐसे पदार्थ का आशय निकाला जाता है, जिसको ग्रहण करने के बाद हम कालवाह्य हो जाते हैं,कालातीत हो जाते हैं, काल के गुणधर्म से परे हो जाते हैं। अस्तित्व का विस्तार त्रिकाल में हो जाता है। लेकिन यह अमृत और अमरत्व की बहुत रूढ़ व्याख्या है। रूपांतरण की प्रक्रिया के जरिए अपने अस्तित्व को बनाए रखना भी एक प्रकार का अमरत्व है। भारतीय संस्कृति का अमरत्व कुछ इसी प्रकार का है। सामयिक परिवर्तनों को आत्मसात करने की प्रक्रिया में भारतीय संस्कृति का कलेवर बदल जाता है,लेकिन उसके मूलाधार नहीं बदलते। वह नितनवीन होने के साथ भी चिरपुरातन भी बनी रहती है। नितनवीन और चिरपुरातन के बीच संतुलन बिंदुओं की खोज और उनको साधने की प्रक्रिया में कुंभ जैसे आयोजनों का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। आज जब हम परिवर्तनों के अंधड़ में जी रहे हैं तब इस संतुलन के नवीन सूत्रों की खोज अपेक्षाकृत अधिक आवश्यक हो गई है। यदि हम कुंभ को व्यवस्थागत संवाद के प्लेटफार्म के मूलस्वरूप में स्थापित करने में सफल हो जाते हैं तो निश्चित रूप से संतुलन के नवीन सूत्रों की खोज भी कर लेंगे। ऐसा करना अपनी सांस्कृतिक धारा को अक्षय बनाए रखने के लिए जरूरी है। ■

कार्पोरेट जगत के कारण सरकार पर निर्भरता कम हुई है- प्रमोद मजूमदार

"चार दशक तक एजेंसी की पत्रकारिता में रहने के पश्चात यूएनआई की हिंदी सेवा यूनिवार्ता से हाल ही में सेवानिवृत्त हुए हैं। एजेंसी की पत्रकारिता के संदर्भ में संवादसेतु की टीम ने उनसे लंबी बातचीत की। प्रस्तुत है बातचीत के चयनित अंश–

पत्रकारिता के क्षेत्र में आपका आगमन कैसे हुआ?

प्रमोद मजूमदार ने बताया कि जब मैं नागपुर में विद्यार्थी परिषद का कार्यकर्ता था, तो उस समय मैं संपादक के नाम चिट्ठियां लिखा करता था। चिट्ठियां लिखने में, मैं बहुत आनंद महसूस करता था और धीरे–धीरे 1973 में हिंदुस्थान समाचार, नागपुर से जुड़ गया। 1979 में, मैं दिल्ली हिंदुस्थान समाचार में आ गया था और इसी बीच आपातकाल लगा। चूंकि मै हिंदुस्थान समाचार में पत्रकार था तो सभी समाचार पत्रों के लोगों के बीच में, मेरी अच्छी पैंठ बन गई थी। मैं काफी अच्छी–अच्छी स्टोरी देने लगा था। इन्हीं सारी वजहों से आज मैं पत्रकारिता के इस मुकाम पर हूं।

आपने लंबे समय तक एजेंसी की पत्रकारिता की है, पहले के समाचार पत्र एजेंसियों की खबरों पर ही निर्भर रहते थे किन्तु आज एजेंसियों की खबरों को फिलर के तौर पर अधिक प्रयोग किया जाता है। इसके पीछे क्या कारण है?

इसके पीछे सबसे बड़ा कारण इलैक्ट्रॉनिक मीडिया है। पहले आज की तरह टीवी चैनल नहीं हुआ करते थे जो सबसे पहले और सबसे तेज खबर पहुंचाने की होड़ में लगे रहें। इसके अलावा पहले एजेंसी के पत्रकार भी एक्टिव रहते थे। वह समाचारों की तलाश में घूमा करते थे किन्तु आज वह कार्यालय में बैठकर टीवी देखकर भी खबरें बना देते हैं। पहले एजेंसी समाचारों का स्रोत हुआ करती थी किन्तु आज एजेंसियां टीवी को अपना स्रोत बना रही हैं और उसका अनुसरण कर रही हैं।

ऐसे में क्या आपको लगता है कि आज एजेंसी की वास्तविक भूमिका बची है?

आज इलैक्ट्रॉनिक मीडिया का जाल फैलता जा रहा है जिसके कारण एजेंसियों का इतना ज्यादा प्रभाव नहीं रहा। इसके अलावा वेबसाइट, वेबपोर्टलों, ब्लॉग और सोशल मीडिया का प्रभाव भी बढ़ता जा रहा है। किन्तु इन सबके बावजूद भी पीटीआई और यूएनआई जैसी एजेंसियां ऐसे क्षेत्रों में भी पहुंचती है जहां अन्य माध्यम नहीं पहुंच पाते। इसीलिए इनका कोई मुकाबला नहीं है।

किसी समय में एजेंसियां सुदूर क्षेत्रों के भी समाचार दिया करती थीं। किन्तु आज समाचारों के लिए टेलीविजन पर निर्भरता होने के कारण क्या एजेंसी भी उसी की तरह महानगरों तक सिमट गई है?

जब मैं 'हिन्दुस्थान समाचार' में था तो उस समय एक दूसरी समाचार समिति 'समाचार भारती' भी थी। हिन्दुस्थान समाचार और समाचार भारती का दायरा भी काफी व्यापक था। किन्तु आज इन दोनों ही एजेंसियों का दायरा उतना व्यापक नहीं है। इलैक्ट्रॉनिक मीडिया भले ही आज गांवों में पहुंच गया हो किन्तु कवरेज में निश्चित रूप से कमी आई है क्योंकि समाचार चैनल क्षेत्रीय स्तर पर वहां के ही व्यक्ति को कैमरा थमा देते हैं और वही उन्हें समाचार देता है। एजेंसियां भी इन्हीं समाचार चैनलों के माध्यम से समाचार प्राप्त कर लेती है जिसके कारण आज

घटनास्थल पर जाकर रिपोर्टिंग करने की प्रवृत्ति घटी है। यह बात बिल्कुल सही है कि चैनलों और समाचार पत्रों, दोनों में क्षेत्रीय समाचारों का स्थान घटा है।

क्षेत्रीय स्तर पर आज समाचार समितियों के कार्यालय या तो बंद हो रहे हैं या सिमट रहे हैं। इसके अलावा पत्रकारों की संख्या भी कम हो रही है। इसके पीछे क्या कारण है?

आज काम की दशाओं में परिवर्तन आया है। पहले जहां समाचार संकलन के लिए 10 लोगों को रखा जाता था वहां आज यह कार्य 2–3 पत्रकार ही कर देते हैं। इसके पीछे कारण यह है कि सूचना क्रांति के कारण आज भागदौड़ ज्यादा करने की जरूरत नहीं रहती और बैठे–बिठाए भी समाचार प्राप्त किए जा सकते हैं। वहीं प्रतिस्पर्धा के कारण भी क्षेत्रीय स्तर पर एजेंसियों के कार्य में कमी आई है क्योंकि आज समाचार पत्र या चैनल क्षेत्रीय स्तर पर अपने निजी संवाददाताओं की नियुक्ति कर रहे हैं। इसके अलावा पश्चिमी हितों के कारण भी क्षेत्रीय स्तर पर एजेंसियां सिमटती जा रही है।

क्षेत्रीय स्तर पर राष्ट्रीय समाचारों और क्षेत्रीय समाचारों में क्या अंतर रहता है?

हिन्दुस्थान समाचार का कार्य भाषाई पत्रकारिता के लिए रहता था। जब मैं नागपुर में हिन्दुस्थान समाचार में था तो उस दौरान दिल्ली से राष्ट्रीय समाचार जरूर आया करते थे किंतु हमारा प्रयास क्षेत्रीय समाचार जुटाने का ज्यादा रहता था और इसका लाभ क्षेत्रीय स्तर पर हमारी सेवाएं लेने वाले समाचार–पत्रों को होता था। क्षेत्रीय समाचार सेवा का अधिकतम लाभ आकाशवाणी को अपने बुलेटिन तैयार करने के लिए मिलता था। वह अपने बुलेटिनों में हिन्दुस्थान समाचार को क्रेडिट लाइन भी देते थे। रिपोर्टिंग की दृष्टि से दोनों में ज्यादा अंतर नहीं है।

आपातकाल के दौरान आपके कुछ अनुभव?

उस समय निश्चित रूप से प्रेस सेंसरशिप के कारण पत्रकारिता बहुत प्रभावित हुई। सरकार विरोधी समाचारों पर प्रतिबंध लगा दिया गया था। लेकिन उस समय भी कुछ ऐसे

समाचार पत्र थे जो इन सब प्रतिबंधों के बावजूद भी निष्पक्ष खबरें देने की हिम्मत जुटा रहे थे। उस समय नागपुर में महाराष्ट्र विधानसभा के अधिवेशन में मैने देखा कि वहां पूर्व और पश्चिम दिशा में दो गैलरियां होती थी जहां एक तरफ भाषाई पत्रकार और दूसरी तरफ अंग्रेजी समचार पत्रों के पत्रकार बैठते थे। दोनों के सेंसर अधिकारी अलग–अलग हुआ करते थे। वो सेंसर अधिकारी सरकार विरोधी समाचारों को तो दूर, विधानसभा में शोर शराबे की भी खबर नहीं चलने देते थे। ऐसे में पत्रकारों ने रास्ता निकाला कि समाचार की कॉपी को यदि एक सेंसर अधिकारी रद्द करता था तो वह दूसरे के पास चले जाते थे और वह ठप्पा लगाकर स्वीकार कर देता था। सेंसर अधिकारियों में विरोध के कारण यह संभव हो पाता था।

आमतौर पर कहा जाता है कि आपातकाल के बाद पत्रकारिता के स्तर में काफी गिरावट आई है। क्या आपको यह गिरावट न्यूज एजेंसियों में दिखती है?

समाचारों की बात करें तो उसमें घटना और तथ्य को यथावत प्रस्तुत किया जाता है और उसमें अपने विचारों को गौण रखा जाता है। एजेंसी का पत्रकार ज्यादा समय तक समाचार अपनी जेब में नहीं रख सकता और उसे समाचार मिलते ही तुरंत देना होता है। हां, गिरावट की बात करें तो आज पत्रकारिता का व्यावसायीकरण हो गया है। समाचार चैनलों और पत्रों पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा है। वहीं एजेंसी की बात करें तो कार्पोरेट जगत के कारण आज सरकारी निर्भरता में कमी आई है। आज मीडिया की आर्थिक जरूरत निजी क्षेत्र के बड़े कार्पोरेट घराने पूरी कर रहे है। इसीलिए मीडिया पर आज सरकार का नियंत्रण घटा है और बाजार का नियंत्रण बढ़ा है।

> ***"प्रतिस्पर्धा के कारण आज समाचारों की विश्वसनीयता प्रभावित हो रही है। ब्रेकिंग न्यूज व सबसे पहले समाचार देने के चक्कर में समाचारों को क्रॉस चेक भी नहीं किया जाता है।"***

किन्तु इन सबके बीच समाचारों की विश्वसनीयता में कमी आने का क्या कारण हैं?

प्रतिस्पर्धा के कारण आज समाचारों की विश्सनीयता प्रभावित हो रही है। ब्रेकिंग न्यूज व सबसे पहले समाचार देने के चक्कर में समाचारों को क्रॉस चैक भी नहीं किया जाता है।

मीडिया पर आज आत्मनियंत्रण के प्रयास किए जा रहे हैं। यह बात सही है कि मीडिया भी अपनी सीमाएं पार कर रहा है किन्तु अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भी जरूरी है। ऐसे में मीडिया के उच्च स्तर को बनाए रखने के लिए क्या किया जाना चाहिए?

मीडिया पर किसी भी प्रकार का बाहरी नियंत्रण नहीं होना चाहिए। पत्रकारों को स्वविवेक से ही सही–गलत की पहचान करनी चाहिए। आपातकाल के दौरान कई पत्रकारों ने स्वविवेक का परिचय देते हुए सही का साथ दिया व सरकार के खिलाफ गए। इसी तरह वर्तमान में भी स्वविवेक का परिचय पत्रकारों को देना चाहिए। किन्तु दुर्भाग्य की बात है कि निजी हितों की पूर्ति के कारण ऐसा नहीं हो पा रहा है। यदि आप किसी का आभार लेते हैं तो आप निष्पक्षता के साथ नहीं लिख पाते। इन सबके बावजूद भी हाल ही में जो भ्रष्टाचार के इतने सारे मामले सामने आए वो सब मीडिया के ही कारण संभव हो पाया है और इससे सरकार भी परेशान हो गई है। आज जिस तरह से मीडिया पर नियंत्रण करने के प्रयास और अन्य परिस्थितियां दिखाई दे रही है उसको देखते हुए फिर से आपातकाल की आहट दिखाई दे रही है।

क्या न्यू मीडिया मुख्य धारा की मीडिया का स्थान लेता जा रहा है? या भविष्य में इसकी कोई संभावना दिखाई दे रही है?

न्यू मीडिया अतिरिक्त मीडिया के तौर पर हो सकता है। मुख्यधारा की मीडिया में जो खबर नहीं आ पाती है वो न्यू मीडिया के माध्यम से सामने आ जाती है। इसके अलावा मुख्य धारा की मीडिया भी न्यू मीडिया का सहारा लेता है। बड़े–बड़े नेता ट्विटर जैसी सोशल साइट पर अपने विचार लिखते हैं। किन्तु आज भी देश की जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग इंटरनेट से दूर है। कई सुदूर क्षेत्रों तक तो बिजली ही अभी तक नहीं पहुंची है तो ऐसे में वह सोशल साइट कहां से देखेंगे। इन सबके बावजूद भी जितनी जनसंख्या तक पहुंच रहा है उनको इस माध्यम से सही जानकारी पहुंचाने से ही पत्रकारिता का कुछ लक्ष्य तो अवश्य पूरा होगा।

क्या राजनीतिक मुद्दों को अधिक तवज्जों देने से मीडिया अन्य मुद्दों से दूर हो रहा है?

मुझे ऐसा नहीं लगता। समाचारों की दृष्टि से आज विभिन्न क्षेत्रों के लिए अलग–अलग विभाग बने हैं। राजनीति के अलावा खेल, वाणिज्य अनेक प्रकार के पृष्ठ बनते हैं। वाणिज्य के लिए तो कई पत्र–पत्रिकाएं अलग से भी प्रकाशित होती हैं। समाचार पत्रों में भी आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, चिकित्सा संबंधी विभिन्न खबरें समाहित रहती है।

पत्रकारिता के क्षेत्र में आज पत्रकारों की आर्थिक स्थिति ज्यादा अच्छी नहीं है। इसके अलावा पत्रकारों को अन्य क्षेत्रों में मिलने वाली सुविधाएं जैसे पेंशन, सेवानिवृत्ति लाभ जैसी सुविधाएं नहीं मिलती। इस पर आपके क्या विचार है?

आज पत्रकारिता में आर्थिक स्थिति को लेकर जिस तरह संघर्ष करना पड़ रहा है, वह पहले नहीं था। आज पत्रकारों की आर्थिक स्थिति ज्यादा अच्छी न होने के पीछे कारण यह है कि पत्रकारों के लिए आवाज उठाने वाले संगठन ज्यादा प्रभावी नहीं है। दूसरी तरफ सरकार यदि कोई नियम बना भी दें तो उससे कुछ लाभ नहीं होने वाला क्योंकि अखबार पत्रकारों को कांट्रेक्ट पर रख रहे हैं। इसके लिए पत्रकारों के संगठनों को ही आवाज उठानी होगी।

असम दंगों के दौरान पत्रकारों ने सुरक्षा की जो मांग की उसको मद्देनजर रखते हुए क्या पत्रकारों की सुरक्षा के लिए कुछ उपाय होने चाहिए?

पत्रकारिता एक चुनौती है और यदि आप इस चुनौती को स्वीकार करना चाहते हैं तो संघर्ष करना ही पड़ेगा। सीमा पर जिस तरह जवान देश की रक्षा करता है उसी तरह पत्रकार भी देश का सेवक है। उसका एकमात्र हथियार कलम ही है और यदि आप सच्चाई को सामने लाने के लिए दृढ़ निश्चय कर लेते हैं तो आपको कोई नहीं रोक सकता। ■

खलनायक नहीं, नायक है तू

समरथ को नही दोष गोसाईं की पंक्तियां व्यवस्था में मत्स्य न्याय जैसी स्थिति की तरफ संकेत करने के लिए उपयोग में लाई जाती हैं। जब कानून व्यक्तियों का भार देखकर काम करने लगता है, व्यक्ति की प्रतिष्ठा और प्रभावित करने की क्षमता से संविधान के अनुच्छेद घुटन सी महसूस करने लगते हैं, तब गोस्वामी तुलसीदास की यह पंक्तियां बरबस याद आ जाती हैं। अभी तक इस पंक्ति का उपयोग राजनीतिक–आर्थिक संदर्भों में होता रहा है। शायद, यह मान लिया गया था कि सामर्थ्य इन दोनों क्षेत्रों तक सीमित रहती है। व्यवस्था के पारंपरिक ढांचे का विश्लेषण एक हद तक इस मान्यता पर मुहर भी लगाता है कि रसूख का स्वरूप या तो राजनीतिक होता है अथवा आर्थिक। लेकिन हाल–फिलहाल की कुछ घटनाएं इस बात की तरफ इशारा करती हैं कि रसूखदारी अब राजनीति अथवा आर्थिकी की बपौती नहीं रह गई है।

सामर्थ्य में हिस्सेदारी रखने वाले कुछ नवघटक व्यवस्था में जुड़ चुके हैं। संजय दत्त की सजा के बाद जिस तरह का गुबार और अंधड़ पैदा करने की कोशिश की गई, वह इस बात की तस्दीक करते हैं। सजा के बाद व्यवस्था की विसंगतियों पर जैसे गंभीर सवाल उठाए गए और जिस तरह से दूर–दराज के अपरिचित हमदर्द मदद के लिए सामने आए, उससे तो ऐसा लगा कि मानो गलती संजय दत्त की नहीं, माननीय उच्चतम न्यायालय की है। संजय दत्त के खिलाफ हुई कथित ज्यादती को दूर करने के लिए कुछ लोगों ने व्यवस्था परिवर्तन की बात की तो कुछ अन्य ने व्यवस्था के गैर–पारंपरिक विधानों का उपयोग कर उच्चतम न्यायालय द्वारा हो गई गलती को सुधारने का अभियान चलाया। इस अभियान के मुखिया बने प्रेस परिषद् के अध्यक्ष – मार्कंडेय काटजू और इस गंभीर वैधानिक विमर्श को आगे बढ़ाया मीडिया ने।

मार्कंडेय काटजू ने बहस की शुरूआत करते हुए कहा कि क्योंकि संजय दत्त एक अच्छे आदमी हैं, उनके पास परिवार है और उनका ताल्लुक एक समाजसेवी परिवार से है, इसलिए मानवीय आधार पर उनको सजा से मुक्ति मिलनी चाहिए। इसके बाद तो संजय दत्त के पक्ष में जिरह करने वालों की भीड़ लग गई। कांग्रेसी नेता दिग्विजय सिंह ने कहा अपराध के समय उनकी उम्र मात्र 33 वर्ष थी। उन्होंने बचपने में एक गलती कर दी थी, इसलिए उनको क्षमादान मिलना चाहिए। पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी का मानना था कि संजय दत्त पहले ही काफी कुछ भुगत चुके हैं और अधिक सजा की जरूरत नहीं है। अभिनेत्री राखी सावंत तो इतनी भावविह्वल थीं कि उन्होंने खुद को संजय की जगह जेल जाने के लिए प्रस्तुत कर दिया। आंध्र के पूर्व अभिनेता और वर्तमान में नेता चिरंजीवी ने कहा कि संजय ने काफी सजा पहले ही काट ली है, अब उनको दया के आधार पर सजा से मुक्त कर दिया जाना चाहिए। धर्मेंद्र ने फरमाया कि मेरा हृदय संजय के लिए रोता है। बीमार अमर सिंह यकायक सक्रिय हो गए और वह अभिनेत्री जयाप्रदा को लेकर महाराष्ट्र के राज्यपाल के. शंकरनारायणन के पास जा पहुंचे तथा दरबार में माफी की गुहार लगाई। इन सारे लोगों के पास कोई ठोस तर्क नहीं थे। अपने को हमेशा क्रांतिकारी मुद्रा और नई सोच की पैरोकार के रूप में प्रस्तुत करने वाली तवलीन सिंह ने भी अपनी धारदार कलम संजय के पक्ष में चलाई। सभी माननीय, बेचारे संजय के हक की लड़ाई मानवीय मूल्यों के आधार पर लड़ रहे थे।

संजय दत्त की असली पैरवी तो आम आदमी पार्टी के संस्थापकों में से एक शांतिभूषण ने की। उन्होंने 26 मार्च को 'द हिंदू' में एक लेख लिखकर कानूनी जिरह की और उच्चतम न्यायायलय से संजय दत्त को सजा देने की अपनी गलती सुधारने की अपील की। इस लेख में उन्होंने लिखा कि संजय दत्त ने सांप्रदायिक हिंसा से उपजी हुई स्थितियों को ध्यान में रखते हुए अपने पास एके–56 जैसे हथियार रखे थे। उस समय उग्र भीड़ कुछ भी कर सकती थी, इसलिए उन्होंने उग्र भीड़ से अपनी रक्षा के लिए सुरक्षा के घातक हथियार रखे थे। किसी भी व्यक्ति को अपनी सुरक्षा के लिए ऐसा करने का हक है। अब चूंकि भारतीय कानून घातक हथियारों का लाइसेंस नहीं देते, इसलिए संजय दत्त के पास डी कंपनी की शरण में जाने के सिवाय कोई विकल्प ही नहीं

बचा था।

पहली श्रेणी के तर्क तो इतने सतही और भोथरे हैं कि उनके खंडन की जरूरत ही नहीं पड़ती। अब यदि किसी अपराधी के लिए इस आधार पर क्षमा मांगी जाए कि उसके पास बीवी–बच्चे हैं, तब तो भारत के 99 प्रतिशत अपराधियों को छोडना पड़ेगा। वैसे भी पिछले कुछ समय में काटजू द्वारा दिए गए बयानों का विश्लेषण करने से यह स्पष्ट होता है कि वह मानते हैं कि सारी विद्वता उनके पास है और निर्णय सुनाने का तो वह एकाधिकार रखते हैं। शायद, इसी कारण अधिकांश पत्रकार उनको मूर्ख लगते हैं। संजय दत्त के प्रकरण में भी वह अपने से असहमति रखने वाले लोगों को खुलेआम मूर्ख और बेवकूफ बता रहे थे। उनको याद रखना चाहिए कि वह माननीय न्यायालय की परिधि से बाहर आ चुके हैं। अब उनके निर्णयों और कथनों से सैकड़ों लोग असहमत होंगे। इस स्थिति में गुर्राने की बजाय सलीके से और तथ्यों और तर्कों के आधार पर बातचीत करना ही अधिक प्रभावी होता है। मीडियाई क्षेत्र तो वैसे भी बाल की खाल निकालने के लिए प्रसिद्ध है और जब खाल ही उधड़ी हुई हो तो मीडिया को खिंचाई करने से कौन रोक सकता है ? अन्य लोग तो हमदर्दी दिखाने के बहाने यह सिद्ध करना चाह रहे थे कि बालीवुड की पैरोकारी का दमखम उन्हीं के पास है और जब उच्चतम न्यायालय ने अन्याय किया है तो सभी लोग, सभी दिशाएं देख लें कि वह हक की लड़ाई लडने में सबसे आगे हैं। दिग्विजय सिंह तो बयान ही खंडन करने के लिए देते हैं। हेमंत करकरे के बारे मे दिग्विजय के बयान का खंडन कुछ ही मिनटों में खुद करकरे की पत्नी ने कर दिया था। अब यदि मान लिया जाए कि संजय 33 साल की उम्र में एके–56 जैसे खिलौने का महत्व नहीं जानते थे, फिर भी उनको पाक–साफ नहीं बताया जा सकता। एबीपी न्यूज सन् 2000 में उनके दाउद के दाहिने हाथ माने जाने वाले गुर्गे से बातचीत के टेप का प्रसारण कर चुका है।

अब प्रश्न यह उठता है कि संजय दत्त से अनजाने में गलती हुई थी तो 7 सालों बाद वह क्यों पाकिस्तानी आकाओं को याद कर रहे थे और कुछ फरियादें भी कर रहे थे।

अब कानूनी पक्ष की बात करते हैं। कानून की बारीकियों में जाने से पहले यह आवश्यक हो जाता है कि हम संजय दत्त के अपराधों की पड़ताल कर लें। टाडा कोर्ट में सीबीआई ने संजय दत्त के ऊपर जो आरोप लगाए हैं उसके अनुसार 16 जनवरी 1993 को अबू सलेम ने 3 एके–56 रायफलें, 25 हैंडग्रेनेड और 7 एमएम की पिस्टल रखने के लिए दी। इनमें से एक एके–56 रायफल को अपने पास रखकर, शेष सारे हथियार उन्होंने हनीफ लाकड़ावला और समीर हिंगोरा को सौंप दिए। मॉरीशस में शूटिंग के दौरान संजय दत्त को इस बात का पता चला कि सीबीआई मुंबई बम विस्फोटों में उनकी संलिप्तता की भी जांच कर रही है। उन्होंने युसूफ नलावाला, अजय मारवा और रसीद मुल्लावाला को इन हथियारों को नष्ट करने की जिम्मेदारी दी। शुरूआत में, संजय दत्त पर टाडा के तहत मुकदमा चलाया गया, बाद में पता नहीं किन कारणों से उन पर से टाडा हटा लिया गया और केवल आर्म्स एक्ट के तहत मुकदमा चलाया जाने लगा। संजय ने न्यायालय में इन तथ्यों की स्वीकारोक्ति भी की।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या दया का अधिकार केवल सबल को मिलना चाहिए या सबल ही दया मांगने की क्षमता रखता है ? जिस आधार पर संजय के लिए,क्षमादान मांगा जा रहा है , क्या इसी आधार पर अन्य लोगों के लिए भी पैरोकारी करने के लिए लोग सामने आएंगे ? नेशलन क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरों के 2011 के आंकड़ों के अनुसार पूरे भारत में लगभग 2 हजार लोग आर्म्स एक्ट के तहत सजा भुगत रहे हैं, जबकि 10 हजार से अधिक लोगों पर आर्म्स एक्ट के तहत मुकदमे चल रहे हैं। इनमें अधिकांश बहुत ही साधारण हथियार रखने के दोषी पाए गए हैं। इसी साल के आंकड़ों के अनुसार 1 लाख 28 हजार सजायाफ्ता कैदियों में से 73 प्रतिशत दसवीं फेल हैं इनमें 30 प्रतिशत तो निरक्षर है। इसी तरह 2 लाख 41 हजार विचाराधीन कैदियों में निरक्षर कैदियों की संख्या 29.5 प्रतिशत और दसवीं फेल कैदियों की संख्या 42.4 प्रतिशत है। इन निरक्षरों और गरीबों के लिए देश में कोई काटजू अपनी आवाज नहीं उठाता। दया का थोड़ा–बहुत हक तो इनका भी है।

दया, निर्बलों और असहायों के लिए मांगी जाती है। जब व्यक्ति संसाधनों के अभाव में अपनी लड़ाई नहीं लड़ पाता अथवा बिना किसी गुनाह के किसी को सजा दे दी जाती है, तब दया मांगी जाती है। यहां तो उल्टी गंगा बहाने की कोशिश की जा रही है। अभियुक्त अपने गुनाहों को स्वीकार कर चुका है और सार्वजनिक रूप से यह घोषणा भी कर चुका है कि वह क्षमादान नहीं मांगेगा। फिर भी, उसके नाम पर कुछ लोग कटोरा लिए हुए घूम रहे हैं। यह अजीब स्थिति है। खलनायक और खलनायकी को वैध ठहराने के प्रयास किसी स्वस्थ व्यवस्था में तो नहीं होते। संजय दत्त का क्षमादान प्रकरण, पूंजी के अबाध प्रवाह के कारण पैदा हुए नवधनाढ्यों की अनियंत्रित मनःस्थिति का संकेतक है। यह अनियंत्रित मनोवृत्ति व्यवस्था को अपने ठेंगे पर नचाना चाहती है और सही–गलत को अपने ढंग से परिभाषित करने की कोशिश करती है। व्यवस्था में ऐसी मनोवृत्ति के शिकार लोगों का प्रचार पाना किसी भी दृष्टि से शुभ नहीं कहा जा सकता।

■

साहित्यिक पत्रकारिता के 'अमृत' विद्यानिवास

सूर्यप्रकाश

हिंदी पत्रकारिता को शिखर तक पहुंचाने में हिंदी साहित्य और साहित्यकारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भारतीयता, भारतीय संस्कृति और सनातन संस्कति के प्रवाह को जीवंत बनाए रखने में हिंदी साहित्य एवं पत्रकारिता ने अपना अथक योगदान दिया है। आज के दौर में हिंदी पत्रकारिता जिस प्रकार साहित्य से विलग दिखाई पड़ती है, ऐसी पहले न थी बल्कि एक वक्त तो ऐसा भी था, जब साहित्य और पत्रकारिता एक–दूसरे का सहारा बन आगे बढ़ रहे थे। हिंदी पत्रकारिता को उसका ध्येय पथ दिखलाने का कार्य समय–समय पर ऐसे पत्रकारों ने किया, जो साहित्य की विधा में भी सिद्धहस्त थे। भारतेंदु हरीश्चंद्र, माखनलाल चतुर्वेदी, हनुमान प्रसाद पोददार, महावीर प्रसाद द्विवेदी, हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि इसी कड़ी के नाम हैं, जिन्होंने हिंदी की लड़ाई लड़ी। साहित्य और पत्रकारिता की इस विरासत को बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में प्रवाहमय बनाए रखने का कार्य किया विद्यानिवास मिश्र ने। मिश्र जी हिंदी साहित्य, परंपरा, संस्कति के मर्मज्ञ थे। हिंदी पत्रकारिता और साहित्य के बेहतरीन और कारगर सम्मिश्रण की मिसाल पेश करने वाले विद्यानिवास मिश्र ने पत्रकारिता के माध्यम से भारतीयता को मुखरता प्रदान की। सन 1926 में गोरखपुर के पकड़डीहा गांव में जन्मे विद्यानिवास मिश्र अपनी बोली और संस्कृति के प्रति सदैव आग्रही रहे। सन 1945 में प्रयाग विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर एवं डाक्टरेट की उपाधि लेने के बाद उन्होंने अनेकों वर्षों तक आगरा, गोरखपुर, कैलीफोर्निया और वाशिंगटन विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य किया। विद्यानिवास मिश्र देश के प्रतिष्ठित "संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय" एवं 'काशी विद्यापीठ' के कुलपति भी रहे। इसके बाद अनेकों वर्षों तक वे आकाशवाणी और उत्तर प्रदेश के सूचना विभाग में कार्यरत रहे। हिंदी साहित्य के सर्जक विद्या निवास मिश्र ने साहित्य की ललित निबंध की विधा को नए आयाम दिए। हिंदी में ललित निबंध की विधा की शुरूआत प्रतापनारायण मिश्र और बालकृष्ण भटट ने की थी, किंतु इसे ललित निबंधों का पूर्वाभास कहना ही उचित होगा। ललित निबंध की विधा के लोकप्रिय नामों की बात करें तो हजारी प्रसाद द्विवेदी, विद्यानिवास मिश्र एवं कुबेरनाथ राय आदि चर्चित नाम रहे हैं। लेकिन यदि लालित्य और शैली की प्रभाविता और परिमाण की विपुलता की बात की जाए तो विद्यानिवास मिश्र इन सभी से कहीं अग्रणी रहे हैं। विद्यानिवास मिश्र के साहित्य का सर्वाधिक महत्वपूर्ण हिस्सा ललित निबंध ही हैं। उनके ललित निबंधों के संग्रहों की संख्या भी 25 से अधिक होगी। लोक संस्कृति और लोक मानस उनके ललित निबंधों के अभिन्न अंग थे, उस पर भी पौराणिक कथाओं और उपदेशों की फुहार उनके ललित निबंधों को और अधिक प्रवाहमय बना देते थे। उनके प्रमुख ललित निबंध संग्रह हैं– राधा माधव रंग रंगी, मेरे राम का मुकुट भीग रहा है,

विद्या निवास मिश्र

शेफाली झर रही है, चितवन की छांह, बंजारा मन, तुम चंदन हम पानी, महाभारत का काव्यार्थ, भ्रमरानंद के पत्र, वसंत आ गया पर कोई उत्कंठा नहीं और साहित्य का खुला आकाश आदि। वसंत ऋतु से विद्यानिवास मिश्र को विशेष लगाव था। उनके ललित निबंधों में ऋतुचर्य का वर्णन उनके निबंधों को जीवंतता प्रदान करता था। वसंत ऋतु पर लिखे अपने निबंध संकलन फागुन दुइ रे दिना में वसंत के पर्वों को व्याख्यायित करते हुए, 'अपना अहंकार इसमें डाल दो' शीर्षक से लिखे निबंध में वे शिवरात्रि पर लिखते हैं–

"शिव हमारी गाथाओं में बड़े यायावर हैं। बस जब मन में आया, बैल पर बोझा लादा और पार्वती संग निकल पड़े, बौराह वेश में। लोग ऐसे शिव को पहचान नहीं पाते। ऐसे यायावर विरूपिए को कौन शिव मानेगा ? वह भी कभी–कभी हाथ में खप्पर लिए। ऐसा भिखमंगा क्या शिव है ?"

"शिव हमारी गाथाओं में बड़े यायावर हैं। बस जब मन में आया, बैल पर बोझा लादा और पार्वती संग निकल पड़े, बौराह वेश में। लोग ऐसे शिव को पहचान नहीं पाते।"

इसके बाद इन पंक्तियों को विवेचित करते हुए विद्यानिवास मिश्र लिखते हैं– "हां, यह जो भीख मांग रहा है, वह अहंकार की भीख है। लाओ, अपना अहंकार इसमें डाल दो। उसे सब जगह भीख नहीं मिलती। कभी–कभी वह बहुत ऐश्वर्य देता है

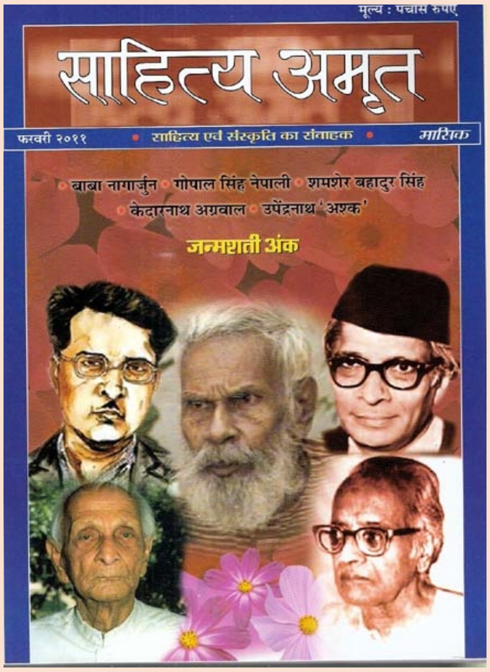

और पार्वती बिगड़ती हैं। क्या आप अपात्र को देते हैं ? शिव हंसते हैं, कहते हैं, इस ऐश्वर्य की गति जानती हो, क्या है ? मद है। और मद की गति तो कागभुसुंडि से पूछो, रावण से पूछो, बाणासुर से पूछो।''

इन पंक्तियों का औचित्य समझाते हुए मिश्र जी लिखते हैं– ''पार्वती छेड़ती हैं कि देवताओं को सताने वालों को आप इतना प्रतापी क्यों बनाते हैं ? शिव अट्टहास कर उठते हैं, उन्हें प्रतापी न बनाएं तो देवता आलसी हो जाएं, उन्हें झकझोरने के लिए कुछ कौतुक करना पड़ता है।'' यह मिश्र जी की अपनी उदभावना है, प्रसंग पौराणिक हैं, किंतु वर्तमान पर लागू होते हैं। पुराण कथाओं का संदर्भ देते हुए विद्यानिवास मिश्र ने साहित्य के पाठकों को भारतीय संस्कृति का मर्म समझाने का प्रयास किया है। उनके ललित निबंधों में जीवन दर्शन, संस्कृति, परंपरा और प्रकति के अनुपम सौंदर्य का तालमेल मिलता है। इस सबके बीच वसंत ऋतु का वर्णन उनके ललित निबंधों को और अधिक रसमय बना देता है। ललित निबंधों के माध्यम से साहित्य को अपना योगदान देने वाले विद्यानिवास हिंदी की प्रतिष्ठा हेतु सदैव संघर्षरत रहे, मॉरीशस से सूरीनाम तक अनेकों हिंदी सम्मेलनों में मिश्र जी की उपस्थिति ने हिंदी के संघर्ष को मजबूती प्रदान की। हिंदी की शब्द संपदा, हिंदी और हम, हिंदीमय जीवन और प्रौढ़ों का शब्द संसार जैसी उनकी पुस्तकों ने हिंदी की संप्रेषणीयता के दायरे को विस्तृत किया। तुलसी और सूर समेत भारतेंदु, अज्ञेय, कबीर, रसखान, रैदास, रहीम और राहुल सांकृत्यायन की रचनाओं को संपादित कर उन्होंने हिंदी के साहित्य को विपुलता प्रदान की। विद्यानिवास जी कला एवं भारतीय संस्कति के मर्मज्ञ थे। खजुराहो की चित्रकला सूक्ष्मता और तार्किकता से अध्ययन कर उसकी नई अवधारणा प्रस्तुत करने वाले विद्यानिवास मिश्र ही थे। अकसर भारतीय चिंतक विदेशी विद्वानों से बात करते हुए खजुराहो की कलाकतियों को लेकर कोई ठोस तार्किक जवाब नहीं दे पाते थे। विद्यानिवास जी ने अपने विवेचन के माध्यम से खजुराहो की कलाकृतियों की अवधारणा स्पष्ट करते हुए लिखा है– ''यहां के मिथुन अंकन साधन हैं, साध्य नहीं। साधक की अर्चना का केंद्रबिंदु तो अकेली प्रतिमा के गर्भग्रह में है। यहां अभिव्यक्ति कला रस से भरपूर है। जिसकी अंतिम परिणति ब्रहम रूप है। हमारे दर्शन में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की जो मान्यताएु हैं, उनमें मोक्ष प्राप्ति से पूर्व का अंतिम सोपान है काम।'' उन्होंने कहा कि यह हमारी नैतिक दुर्बलता ही है कि खजुराहो की कलाकृतियों में हम विकत कामुकता की छवि पाते हैं। स्त्री पुरूष अनादि हैं, जिनके सहयोग से ही सृष्टि जनमती है।

सन 1990 के दशक में मिश्र जी ने नवभारत टाइम्स के संपादक के रूप में जिम्मेदारी संभाली। उदारीकरण के दौर में खांटी हिंदी पत्रकारिता को आगे बढ़ाने वाले महत्वपूर्ण पत्रकारों में से एक मिश्र जी ने नवभारत टाइम्स को हिंदी के प्रतिष्ठित समाचार पत्र के रूप में नई पहचान दिलाई। पत्रकारीय धर्म और उसकी सीमाओं को लेकर वे सदैव सचेत रहते थे। वे अकसर कहा करते थे कि ''मीडिया का काम नायकों का बखान करना अवश्य है, लेकिन नायक बनाना मीडिया का काम नहीं है।'' अपने पत्रकारीय जीवन में भी विद्यानिवास मिश्र हिंदी के प्रति आग्रही बने रहे। वे अंग्रेजी के विद्वान थे, लेकिन हिंदी लिखते समय अंग्रेजी के शब्दों का घालमेल उन्हें पसंद नहीं था। उन्होंने नवभारत टाइम्स के संपादक की जिम्मेदारी ऐसे वक्त में संभाली, जब हिंदी पत्रों के मालिक उदारीकरण के बाद बाजारू दबाव में हिंदी में अंग्रेजी के घालमेल का प्रयास कर रहे थे। अखबार मालिकों की मान्यता थी कि युवा पाठकों को यदि लंबे समय तक पत्र से जोड़े रखना है, तो हिंदी में अंग्रेजी शब्दों को जबरदस्ती ही सही, घुसाना ही होगा। नवभारत टाइम्स के मालिक समीर जैन की भी यही मान्यता थी कि हिंदी समाचार पत्रों में अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग होना वक्त की जरूरत है। इन्हीं वाद–विवादों के बीच उन्होंने नवभारत टाइम्स के संपादक की जिम्मेदारी से स्वयं को मुक्त कर लिया, किंतु हिंदी में घालमेल को लेकर वे कभी राजी नहीं हुए। हालांकि विद्यानिवास जी के नवभारत टाइम्स छोड़ने के बाद यह पत्र उसी राह पर आगे बढ़ा, जिस पर इसके मालिक समीर जैन ले जाना चाहते थे। विद्यानिवास जी ने नवभारत टाइम्स से अलग होने के बाद साहित्य अमृत पत्रिका का संपादन किया। व्यावसायिकता के बाजारू दौर में 'साहित्य अमृत' पत्रिका ने विद्यानिवास जी के संपादकत्व में बतौर साहित्यिक पत्रिका नए मानक स्थापित किए। साहित्य अमृत का सौवां अंक भी विद्यानिवास जी के समय ही निकला था। पत्रिका के सौवें अंक के संपादकीय में संकल्पपूर्ण शब्दों में लिखा था– ''हमें इतना परितोष है कि हम साहित्य अमृत पत्रिका को साहित्य की निरंतरता का मानदंड बनाने की कोशिश में लगे हुए हैं।''

साहित्य अमृत पत्रिका ऐसे वक्त में जब पत्रकारीय मूल्य अन्य स्तंभों की भांति ही ढलान पर हों, बाजार के दबाव में आए बिना भारतीय संस्कति के महत्व को उदघाटित करती रही है। सौवें अंक के संपादकीय में भारतीयता का उदघोष करते हुए विद्यानिवास मिश्र ने जयशंकर प्रसाद की पंक्तियों को उद्धृत करते हुए लिखा– ''किसी का हमने छीना नहीं, प्रकृति का रहा पालना यही, हमारी जन्मभूमि थी यही, कहीं से हम आए थे नहीं।''

मिश्र जी 'साहित्य अमृत' पत्रिका का संपादन अंतिम समय तक करते रहे। साहित्य अकादमी पुरस्कार, कालिदास सम्मान, ज्ञानपीठ पुरस्कार, पदम विभूषण, पदमश्री और अनेकों उपाधियों से सम्मानित विद्यानिवास मिश्र का 14 फरवरी, 2005 को सड़क दुर्घटना में देहांत हो गया। उस वर्ष उनका प्रिय पर्व 'वसंत पंचमी' 13 फरवरी को थी। वसंत ऋतु में ही वे अपना शरीर त्यागकर परलोक की यात्रा पर निकल पड़े। पं. विद्यानिवास मिश्र के इस दुनिया से जाने के बाद भी उनकी पत्रकारिता और साहित्य का सौरभ इस रचनाशील जगत को महकाता रहेगा। ■

फेसबुक के नौ वर्ष

4 फरवरी को दुनिया की सबसे बड़ी सोशल नेटवर्किंग साइट फेसबुक ने अपने जीवन का नौवां वसंत देखा। हार्वर्ड विश्वविद्यालय के छात्र मार्क जुकरबर्ग ने 4 फरवरी, 2004 को फेसबुक की शुरूआत फेसमैश के नाम से की थी। शुरू में यह हार्वर्ड के छात्रों के लिए ही अंतरजाल का काम कर रही थी, लेकिन शीघ्र ही लोकप्रियता मिलने के साथ इसका विस्तार पूरे यूरोप में हो गया। सन 2005 में इसका नाम परिवर्तित कर फेसबुक कर दिया गया। दुनिया भर में 2.5 अरब उपयोगकर्ताओं वाली फेसबुक में भी वक्त के साथ कई आयाम जुड़ते चले गए। सन 2005 में फेसबुक ने अपने उपयोगकर्ताओं को नई सौगात दी, जब उसने उन्हें फोटो अपलोड करने की भी सुविधा प्रदान की। फेसबुक के सफर का यह सबसे महत्वपूर्ण और क्रांतिकारी कदम था, जिसने वर्चुअल दुनिया को नए आयाम देने का काम किया। फोटो अपलोड करने की सुविधा इसलिए क्रांतिकारी कदम थी, क्योंकि फोटो के माध्यम से विचारों की अभिव्यक्ति को जीवंतता मिली। बदलते वक्त और बदलते समाज का आईना बनी फेसबुक से देखते ही देखते नौ वर्षों में अरबों लोग जुड़े। सन 2006 के सितंबर माह में फेसबुक ने 13 वर्ष से अधिक आयु के लोगों को फेसबुक से जुड़ने की स्वतंत्रता प्रदान की। इससे इसका दायरा और भी व्यापक हुआ। प्रारंभ में फेसबुक का उपयोग सोशल नेटवर्क स्थापित करने और नए लोगों से जुड़ने के लिए ही होता रहा। लेकिन वक्त की रफ्तार के साथ ही फेसबुक को भी नए आयाम मिले। संगठित मीडिया की चुनी हुई और प्रायोजित खबरों की घुटन से निकलने के लिए भी सामाजिक तौर पर सक्रिय लोगों ने फेसबुक का प्रयोग किया।

दिसंबर 2010 में विश्व ने अरब में क्रांति का अदभुत दौर देखा, अदभुत इसलिए कि अरब के जिन देशों में कई दशकों से तानाशाही शासन चल रहा था, वहां लोगों ने सड़कों पर उतरकर मुखर प्रदर्शन किया। प्रदर्शन ही नहीं तानाशाहियों को सत्ता से खदेड़ने का काम किया। समस्त विश्व उस समय हतप्रभ रह गया कि यह कैसे हुआ ? जिस अरब में आम लोग सरकार की नीतियों की आलोचना करने से भी डरते थे, वहां सत्ता विरोधी ज्वार अचानक कैसे आया। इसका उत्तर केवल यही था– सोशल मीडिया के कारण। ट्यूनीसिया, मिस्र, यमन, लीबिया, सीरिया, बहरीन, सउदी अरब, कुवैत, जॉर्डन, सूडान जैसे पूर्व मध्य एशिया और अरब के देशों ने क्रांति की नई सुबह को देखा। इसका कारण यही था कि वहां के सत्ता प्रतिष्ठानों द्वारा संचार माध्यमों पर लागू 'लौह परदा का सिद्धांत' का विकल्प लोगों को सोशल मीडिया के रूप में मिल गया। सरकारी मीडिया आमजन की जिस आवाज और गुस्से को मुखरित होने से रोक देता था, सोशल मीडिया ने उसका विकल्प और जवाब आम जन के सामने रखा। सरकारी बंदिशों, संपादकीय नीति और समाचार माध्यमों पर बने बाजारू दबावों से मुक्त सोशल मीडिया ने आमजन की आवाज को मंच प्रदान कर मुखरित करने का कार्य किया। सोशल मीडिया द्वारा उभरी इस क्रांति का सबसे लोकप्रिय वाहक बना फेसबुक। एक समय पर अनेकों लोगों के संवाद करने की सुविधा, विचारों को आदान–प्रदान करने का मंच, जिसमें शब्दों की सीमा में बंधे बिना अपने विचारों को अभिव्यक्त किया जा सकता है। फेसबुक की इसी विशेषता ने आमजन के बीच चल रहे विचारों के प्रवाह को दिशा प्रदान की।

अपनी व्यस्त जिंदगी में लोगों ने फेसबुक के माध्यम से अपने विचारों को एक–दूसरे को सहज ढंग से पहुंचाया और राजनीतिक–सामाजिक समस्याओं के प्रति जनांदोलनों की नींव रखी जाने लगी। सोशल मीडिया जनित यह आंदोलन अरब देशों तक ही सीमित नहीं रहे, बल्कि अमरीका के वाल स्ट्रीट होते हुए, यह दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र के जंतर–मंतर तक पहुंच गए। अमरीका में वाल स्टीट घेरो आंदोलन हुआ, जिसमें समृद्ध देश का तमगा धारण किए अमरीका के नागरिकों ने आंदोलन किया और देश के संसाधनों का 1 प्रतिशत लोगों के हाथों में सिमटना चिंताजनक बताया। अमरीका में हुए इस आंदोलन ने दुनिया भर का ध्यान खींचा। इस आंदोलन ने बताया कि दुनिया का शीर्ष देश कहलाने वाले अमरीका में भी किस हद तक गैरबराबरी व्याप्त है। आंदोलनों की इस बयार से भारत भी अछूता नहीं रहा और यूपीए सरकार के भ्रष्टाचार और नीतिगत असफलताओं को लेकर जंतर–मंतर से सड़कों तक सत्ता विरोधी आंदोलन के स्वर मुखरित हुए। यह आंदोलन सोशल मीडिया और उसके प्रमुख घटक फेसबुक की ही देन थे। फेसबुक के नौवें जन्मदिन से कुछ दिन पूर्व ही एक आंदोलन और हुआ। दिल्ली में हुए गैंगरेप के विरोध में आंदोलन। यह आंदोलन तो पूरी तरह उसी जमात का था, जिसे फेसबुकिया या सोशल मीडिया के क्रांतिकारी कहा जाता रहा है। यह कहना ठीक ही होगा कि अपने नौं वर्षों के संक्षिप्त समय में फेसबुक ने नई ऊंचाईयों को छुआ है और मुख्यधारा की मीडिया से अलग भी वैयक्तिक राय की स्वतंत्रता प्रदान करते हुए विभिन्न आंदोलनों को मूर्त रूप दिया है। उम्मीद है कि आने वाले वर्षों में भी फेसबुक नए पायदान चढ़ता जाएगा और वर्चुअल दुनिया की यह क्रांतिकारी बुक आने वाले वक्त में भी आमजन की आवाज को मुखरता प्रदान करती रहेगी। ■

आस्था नहीं, आश्चर्य का कुंभ

सूचनाओं और संदेशों को उसके संदर्भों से काटकर प्रस्तुत करने की प्रक्रिया हमेशा अनर्थ को ही जन्म देती है। जड़ से कटी सूचना पाठक को भी दिग्भ्रमित करती है। कई विशेषज्ञ मानते हैं कि वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में सूचना का स्वरुप भी वैश्विक हो गया है और तथ्य हर परिस्थितियों में समान रुप से प्रभावी होते हैं। लेकिन यह लोग भूल जाते हैं कि तथ्यों के चयन की प्रक्रिया कोई निरपेक्ष प्रक्रिया नहीं है, व्यक्ति की दृष्टि और स्थानीय संस्कृति इस चयन प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। यदि कुंभ को मीडियाई जगत में एक केस स्टडी मानकर अध्ययन किया जाए तो यह स्पष्ट हो जाता है कि परिप्रेक्ष्य विहीन सूचना समझ को बढाती नहीं, बल्कि समझ के चारों ओर एक कुहासा पैदा कर देती है। शायद, इसी कारण, पश्चिमी नजरों में आस्था का एक सैलाब, संवाद का एक वृहद प्लेटफार्म, आश्चर्य के एक आयोजन के रूप में तब्दील हो जाता है। इलाहाबाद में लगभग दो महीने तक चले कुंभ में जहां करोड़ों लोगों ने आस्था की डुबकी लगाई। वहीं पश्चिमी मीडिया भी एक स्थान पर इतने लोगों को देखकर हतप्रभ रहा। ऐसे वक्त में जब उपभोक्तावादी संस्कृति हावी है, तब आस्था और अध्यात्म के संगम में इतने विशाल जनसमुदाय का एकत्रीरण कम से कम विदेशी मीडिया को तो हतप्रभ करने वाला ही था। विश्व के प्रतिष्ठित समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं ने कुंभ मेले को आश्चर्य की दृष्टि से देखा कि किस प्रकार से एक स्थान पर करोड़ों लोग एकत्रित हुए है। संवादसेतु की टीम ने पश्चिमी मीडिया की अंतर्वस्तु की पड़ताल कर उसके दृष्टिकोण को समझने की कोशिश की।

कुंभ पर आश्चर्य व्यक्त करते हुए टाइम मैगजीन ने अपनी वेबसाइट पर लिखा –

मानव समुदाय का सबसे बड़ा एकत्रीकरण इन दिनों उत्तर भारत के इलाहाबाद शहर में चल रहा है। गंगा, यमुना एवं पौराणिक नदी सरस्वती के तट पर कुंभ मेले के उत्सव का आयोजन चल रहा है, जिसमें एक करोड़ से अधिक लोग एकत्रित हैं। यह ऐसा समय है जब भारत की वैश्विक चिंताएं बढ़ रही हैं और सामाजिक समस्याएं भी गहराई हैं, तब इन साधुओं के भभूत से सराबोर चेहरे और सिर पर सांपों की तरह से लिपटे बाल इन सभी समस्याओं को पिछली सीट पर धकेलने का काम करते हैं जो पूरे उन्माद के साथ गंगा में डुबकी लगा रहे हैं। हालांकि इसमें कोई नई बात नहीं है कि भारत से बाहर का कोई भी व्यक्ति इसे समय की बर्बादी ही कहेगा। यहां 19वीं सदी में भारत में तैनात रहे एक अधिकारी का यह वक्तव्य महत्वपूर्ण है, जिन्होंने कुंभ को देखने के बाद यह महसूस किया था कि भारत को ईसाईयत के प्रभाव में लाना जरूरी है।

''अब भी लोग इन पवित्र नदियों के संगम तट पर एकत्र होते हैं। इनमें से कुछ लोग तो जैसे अपना प्राण स्वेच्छा से त्यागने आते हैं। डूबी हुई लाशें जब ऊपर आती हैं तो वह गिद्धों का आहार बन जाती हैं जो आत्माहुति के इस स्थान के चारों तरफ मंडराते रहते हैं। कोई भी समझदार व्यक्ति यदि इस भयानक दृश्य को देखेगा तो प्रसन्नता और अविनाशी आनंद के पीछे पागल इन लोगों के मतांतरण करने की बात उसके भीतर जरूर जगेगी।''

टाइम के अनुसार यह किसी के लिए भी आश्चर्य का विषय हो सकता है कि लोग इतनी विशाल भीड़ से क्यों जुड़ना चाहते हैं। कुछ निश्चित शुभ दिनों में गंगा, यमुना एवं सरस्वती के संगम तट पर लाखों लोग एकत्र होते हैं। एटलांटिक क्वार्ट्ज वेबसाइट ने

इस मेले को वैश्विक संदर्भ में देखते हुए लिखा– ''कल्पना करें कि शंघाई शहर की सारी आबादी 4 गुणा 8 किलोमीटर के मैदान में एकत्र होती है। यहां एकत्र आबादी को देखें तो न्यूयॉर्क का प्रत्येक व्यक्ति, महिला एवं बच्चे यहां अपनी हाजिरी दर्ज कराते हैं। इतना ही नहीं, मेले का क्षेत्र भी पिछली बार की तुलना में बढ़ा है, जहां 2011 में मेले का क्षेत्रफल 1,495.31 हेक्टेयर था एवं 11 सेक्टरों में विभाजित था। वहीं 2013 में मेले का क्षेत्रफल 1936.56 हेक्टेयर एवं 14 सेक्टर हो गया। यह क्षेत्रफल लगभग 4,784 एकड़ हुआ जो लगभग दुनिया के सबसे बड़े पार्क 'मैड्रिड के कासा डे कैंपो' के बराबर है। इसी प्रकार से पत्रिका ने कुंभ के दौरान विभिन्न प्रकार प्रदूषण के आंकड़े भी निकाले हैं और मेला क्षेत्र को एक कठिन क्षेत्र करार देने का प्रयास किया है। हालांकि पत्रिका की वेबसाइट पर ही यूनिवर्सिटी आफ सेंट एंड्रयूज में फीजियोलाजिकल स्टीफन रिचर की यह पंक्तियां भी उद्धृत हैं, जिसमें उन्होंने कुंभ को सामाजिक संबंधों के विकास का प्लेटफॉर्म बताते हुए लिखा है– '' हमारा मानना है कि यह मेला सामाजिक संबंधों का परिचय कराता है और यह बताता है कि हम अकेले नहीं हैं। हम अन्य लोगों को भी बुला सकते हैं और वह लोग हमारे लिए सुरक्षा जाल का काम करते हैं। यहां आकर लोग एक–दूसरे के मंगल की कामना करते हैं और उसके बाद अपने जीवन की सामान्य पटरी पर लौट जाते हैं।''
अंत में पत्रिका ने लिखा है कि संभवतः हिंदुओं के पूर्वज किसी समय एक उद्देश्य के लिए नदी किनारे एकत्र हुए होंगे और यह परंपरा आज भी जारी है।

वहीं 'द गार्जियन' ने अपनी वेबसाइट पर एक सवाल पूछा है कि– दुनिया में ऐसी कौन सी जगह है, जहां किसी भी स्थान से अधिक लोग एकत्र होते हों ? मानव के समूचे इतिहास में ऐसा कौन सा स्थान है, जहां सबसे अधिक लोगों के पैरों के निशान हों ?

इस सवाल के जवाब में पाठकों ने मक्का, टाइम्स स्क्वायर, टोक्यो शिब्युआ क्रासिंग समेत कुंभ को वह स्थान बताया जहां दुनिया भर के किसी भी स्थान से अधिक लोग एकत्र होते हैं। एक पाठक सेरजियो कार्वाल्हो का जवाब था कि– मेरे अनुमान से भारत के इलाहाबाद में यमुना एवं गंगा के संगम तट पर दुनिया में सबसे अधिक लोग कुंभ मेले के दौरान एकत्रित होते हैं और हजारों तीर्थयात्री यहां अस्थियां भी प्रवाहित करते हैं। यहां पर लोग हजारों वर्षों से तीर्थयात्रा के उद्देश्य से एकत्र होते रहे हैं।

वहीं 'द मीडिया इंटरनेशनल' ने कुंभ मेले को दुनिया का सबसे बड़ा पर्व करार देते हुए लिखा कि इस मेले में हज यात्रा से भी अधिक लोग एकत्र होते हैं।

बीबीसी ने मार्क टली की रिपोर्ट के जरिए कुंभ को सामाजिक समरसता, संवाद के मंच एवं विश्व कल्याण के उद्देश्य से लगे कुंभ मेले को केवल साधुओं के करतबों और नागा साधुओं तक ही सीमित रखा। मार्क टली ने अपनी रिपोर्ट में भारत में व्यतीत अपने जीवन में कुंभ को सबसे बड़ा आश्चर्य बताते हुए अमृत मंथन की कथा का जिक्र किया है और मेले में साधुओं के करतबों का जिक्र किया है। कुल मिलाकर बीबीसी की पूरी रिपोर्ट कुंभ को आश्चर्य बताने पर ही केंद्रित रही।

कुंभ मेले के संदर्भ में विदेशी मीडिया कवरेज की बात करें तो उसका पूरा ध्यान कुंभ को आश्चर्य एवं अंध आस्था बताने पर ही केंद्रित रहा। जबकि उसने कुंभ मेले के सामाजिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक पक्ष को नजरंदाज कर दिया। जहां मेले के दौरान दुनिया के अनेकों देशों से लोग इस आयोजन के बारे में जानने एवं उसमें भागीदारी के लिए आए थे तो उसके उलट विदेशी मीडिया ने अपनी बौखलाहट के कारण इस आयोजन को नकरात्मक तौर पर प्रस्तुत करने में ही अपनी सारी ताकत झोंक दी। ■

क्या राजनीतिक हस्तक्षेप से सोशल मीडिया की स्वाभाविकता प्रभावित होगी?

पिछले दिनों कांग्रेस के जयपुर चिंतन शिविर में सोशल मीडिया में कांग्रेस के एजेंडे को रखने के लिए कांग्रेस समर्थित युवाओं को सक्रिय करने और उसके लिए फंडिंग करने की बात की गई। क्या आप मानते हैं कि कांग्रेस के इस प्रयास से सोशल मीडिया की स्वाभाविक अभिव्यक्ति प्रभावित होगी ?

मुख्यधारा की मीडिया हो अथवा सोशल मीडिया, यदि राजनीतिक कार्यकर्ता अपनी पार्टी के पक्ष को रखने के लिए मीडिया में योजनाबद्ध तरीके से सक्रिय होंगे तो उसका प्रभाव भी जरूर देखने को मिलेगा। राजनीतिक कार्यकर्ताओं द्वारा इस प्रकार के प्रयास से सोशल मीडिया की स्वाभाविक अभिव्यक्ति प्रभावित होगी। कांग्रेस के इस प्रयास से मुख्यधारा की मीडिया की तरह सोशल मीडिया की भी व्यक्ति केंद्रित विशेषता प्रभावित होगी। सोशल मीडिया व्यक्ति की राय को अभिव्यक्त करने के बजाय राजनीतिक पार्टियों के एजेंडे को रखने का माध्यम बन जाएगा। यह काम तो मुख्यधारा की मीडिया भी करता है। अब यही काम सोशल मीडिया भी करने लगेगा। निश्चित तौर पर राजनीतिक रूप से योजनाबद्ध तरीके से यदि कोई सोशल मीडिया में सक्रिय होगा तो उसके नकारात्मक प्रभाव पड़ने की संभावना ही अधिक होगी।

अरूण कुमार, रिपोर्टर, लीगेसी इंडिया

सोशल मीडिया में अगर किसी समूह को पैसे देकर खड़ा किया जाए कि वो किसी की बातों और विचारों को अभिव्यक्त करे तो भला ऐसे मौके पर अभिव्यक्ति में स्वाभाविकता को ढूढ़ना दिन में दिये से रोशनी करने जैसा प्रतीत होता है। ऐसे में अभिव्यक्ति में स्वाभाविकता रहने का सवाल ही नही होता। स्वाभाविकता का मतलब होता है कि किसी विषय के बारे में अपने दिमाग में उस क्षण उत्पन्न हुए शब्द या भाव को सामने रखना। ऐसे में अगर अभिव्यक्ति को ही पैसे के माध्यम से खरीदा जाए तो वह विचार शून्य स्वाभाविक होगा। देश को खोखला कर देने वाली कांग्रेस पार्टी अब शायद आमजनों की अभिव्यक्ति में स्वाभाविकता को भी पंगु कर देना चाहती है।

ऋषभ शुक्ला, रिपोर्टर, हिंदुस्तान समाचार

कांग्रेस अपने इस प्रयास से मुख्यधारा की मीडिया की तरह से ही सोशल मीडिया को भी मैनेज करना चाहती है। उसका कहना है कि संघी विचारधारा के लोग सोशल मीडिया पर उसके खिलाफ प्रचार को हवा दे रहे हैं। इसलिए उसने सोशल मीडिया को भी मैनेज करने की ठान ली है। लेकिन सच यह है कि सोशल मीडिया पर सक्रिय लोग जो कांग्रेस की नीतियों की आलोचना कर रहे हैं, वह किसी विचारधारा से प्रेरित नहीं है। आज का युवा तो कांग्रेस अथवा किसी भी पार्टी की गलत नीतियों के खिलाफ अपनी आवज सोशल मीडिया के माध्यम से उठा रहा है। ऐसे में यदि सबसे अधिक खामी कांग्रेस में दिखती है तो युवा कांग्रेस की आलोचना सबसे अधिक करते हैं। कांग्रेस का यह प्रयास सोशल मीडिया को भी एक तरह से मैनेज करने का प्रयास है। इसके परिणाम सोशल मीडिया की स्वाभाविकता के लिहाज से बेहतर साबित नहीं होंगे।

दिव्या चौहान, उपसंपादक, दिव्य हिमाचल

देश की जनता ने कांग्रेस का चरित्र देखा हैं, अपने स्वार्थों के लिए जो पार्टी सी. बी. आई. जैसी संवैधानिक संस्था का दुरुपयोग कर सकती हैं, उसके संक्रमण से सोशल मीडिया भला कैसे बचेगा ? मेरा मानना है कि यह प्रयास नही कांग्रेस का दु:साहस होगा ! अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता इस देश के नागरिकों का मौलिक अधिकार हैं, सरकार या कांग्रेस को उस पर डाका नही डालना चाहिए !! सोशल मीडिया की मौलिकता ही उसका आकर्षण हैं !!

गोकलेश पांडेय, राजनीतिक विश्लेषक

मुझे नही लगता कि राजनीतिक हस्तक्षेप से सोशल मीडिया प्रभावित होगी। सोशल मीडिया अपने विचारों की अभिव्यक्ति का मंच हैं , तो इसमें राजनीतिक अभिव्यक्ति भी होनी चाहिए! जब आर .एस .एस और नरेन्द्र मोदी सोशल मीडिया का राजनितिक उपयोग कर सकते हैं तो भला कांग्रेस क्यों नही कर सकती ??

रजनीकांत, राष्ट्रीय सहारा

मुझे नही लगता कि कांग्रेस की नयी योजना से सोशल मीडिया की किसी तरह की अभिव्यक्ति प्रभावित होगी। क्योंकि सोशल मीडिया ने सभी को अभिव्यक्ति का मंच दिया है, चाहे वो किसी भी राजनीतिक पार्टी का हो या किसी भी विचारधारा का हो। जिस योजना में कांग्रेस पार्टी लगी है उस तरफ भारतीय जनता पार्टी पहले ही काफी काम कर चुकी है। भारतीय जनता पार्टी अभी से ही 2014 के लिए अभियान शुरू कर चुकी है। ऐसे में सभी को हक है कि वे अपने विचारों को बिना किसी दुर्भावना और निजी हमले को पेश करें।

अनुराग पांडेय, पीटीआई

■

स्वागतयोग्य है प्रेरणा की पहल: मनोज मिश्र

नोएडा के सेक्टर– 62 स्थिति प्रेरणा मीडिया नैपुण्य संस्थान में 24 मार्च को पत्रकारों का होली मिलन समारोह आयोजित किया गया। इस कार्यक्रम में दिल्ली एवं एनसीआर के विभिन्न संस्थानों के पत्रकार शामिल हुए। लंबे समय तक जनसत्ता से जुड़े रहे वरिष्ठ पत्रकार मनोज मिश्र ने प्रेरणा की पहल की सराहना करते हुए कहा कि इस कार्यक्रम की अनिवार्यता और सफलता की पुष्टि यहां विभिन्न मीडिया संस्थानों से जुड़े पत्रकारों, संपादकों, मीडिया छात्रों व मीडिया शिक्षकों की गरिमामय उपस्थिति से सहज ही हो रही है। प्रेरणा की पत्रकारिता से संबंध रखने वाले विभिन्न वर्गों को एक प्लेटफार्म पर लाने की पहल का स्वागत किया जाना चाहिए। उन्होंने इस कार्यक्रम के आयोजन के लिए संस्थान को धन्यवाद दिया और आगे भी इस तरह के कार्यक्रमों को करते रहने की अपील की। साथ ही उन्होंने पत्रकारों के मिलन के कार्यक्रमों की संख्या बढ़ाने पर बल दिया। हिंदुस्थान समाचार एजेंसी के संपादक श्री हेमंत विश्नोई ने हिंदुस्थान समाचार की पृष्ठभूमि के बारे में बताते हुए कहा कि यह संस्थान अपने स्थापना के समय से ही विशुद्ध पत्रकारिता के लिए जाना जाता है। उन्होंने इसके संघर्ष के दिनों को याद करते हुए कहा कि क्षेत्रीय अखबारों को ध्यान में रखते हुए तथा उन्हें आगे बढ़ाने के लिए यह संस्थान कार्य करता रहा है।

हिंदुस्तान टाइम्स के पत्रकार श्री विवेक सिन्हा ने कश्मीरी पंडितों का अपनी जन्मभूमि के प्रति गहरे लगाव को दर्शान वाली स्वनिर्देशित लघु फिल्म 'प्रजनथ' को प्रदर्शित किया। कार्यक्रम के समापन पर उपस्थित पत्रकारों ने एक दूसरे को गुलाल लगाकर होली की शुभकामनाएं दीं। इस कार्यक्रम में वरिष्ठ पत्रकार मनमोहन शर्मा, प्रो शिवाजी सरकार व संजय पांडे मुख्य रूप से उपस्थित रहे। ■

शुद्धिकरण के लिए शोध जरूरी : कुमार आनंद

माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय द्वारा 'शोध प्रवृत्ति संवर्धन' विषय पर मालवीय स्मृति भवन में एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें देश के ख्याति प्राप्त पत्रकारों एवं प्रशिक्षु पत्रकारों ने भाग लिया। संगोष्ठी में प्रथम सत्र के मुख्य अतिथि के तौर पर उपस्थित राज्यसभा सांसद व पायनियर के संपादक चंदन मित्रा ने कहा कि जब तक पत्रकार के अंदर जिज्ञासा नहीं है, तब तक पत्रकारिता अधूरी है। पत्रकारों के संदर्भ में चंदन मित्रा ने कहा कि जो पत्रकार अपने क्षेत्र में अनुसंधान करना चाहते हैं, उन्हें अध्ययन अवकाश प्रदान किया जाना चाहिए एवं उक्त समय तक उनकी नौकरी सुरक्षित रखनी चाहिए। संगोष्ठी में अतिथि के तौर पर उपस्थित नेशनल दुनिया के समूह संपादक कुमार आनंद ने कहा कि मीडिया में शोध करने से पूर्व हमें अपने विषय की अवधारणा को ठीक ढंग से समझने का प्रयास करना चाहिए। शोध पर प्रकाश डालते हुए कुमार ने कहा कि वर्तमान परिदृश्य में मीडिया को शुद्ध बनाने के लिए शोध बहुत जरूरी है। उन्होंने कहा कि पहले संपादकीय सिर्फ संपादक ही लिखते थे, परंतु आज के समय में यह जिम्मेदारी किसी को भी सौंप दी जाती है। संगोष्ठी की अध्यक्षता कर रहे माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय के कुलपति प्रोफेसर कुठियाला ने कहा कि प्रत्येक मीडिया सदन में शोध प्रकोष्ठ होना चाहिए।

संगोष्ठी का द्वितीय सत्र 'मीडिया में शोध प्रविधि अनुसंधान' पर था जिसमें नरोत्तम भास्कर व अमित कुमार ने on Applying Academic Research Tools for Critical Journalsim एवं डा.विनीता गुप्ता ने 'क्रॉस मीडिया के स्वामित्व और लोकतंत्र से पहले की चुनौतियों' पर अपने विचार रखे। संगोष्ठी के तृतीय सत्र 'मीडिया शोध' में रमेश कुमार शर्मा ने रिपोर्टिंग की महत्ता पर प्रकाश डाला।

'शोध एवं रिपोर्टिंग' विषय पर आयोजित चौथे सत्र में हिंदुस्तान टाइम्स के विधि संपादक सत्य प्रकाश ने संबोधित किया। संगोष्ठी में उपस्थित सीएसडीएस के प्रमुख श्री संजय कुमार ने जनमत संग्रह एवं मीडिया विषय पर बोलते हुए कहा कि ऐसे संग्रह उन युवाओं से कराए जाएं जो जुझारू विषयों पर अपनी जिज्ञासा रखते हैं। संजय का मानना यह है कि जनता ऐसे जनमत संग्रहों में विश्वास रखती है।

संगोष्ठी का समापन, सत्र के मुख्य अतिथि संघ लोक सेवा अयोग के अध्यक्ष प्रोफेसर डीपी अग्रवाल के प्रभावशाली वक्तव्य के साथ हुआ। ■

खबर चयनित कोई भी करे, जिम्मेदारी संपादक की

समाचार पत्र में प्रकाशित किसी भी मिथ्या समाचार एवं आलेख के प्रकाशन के मामले में संपादक ही जिम्मेदार होगा। चाहें प्रकाशित सामग्री का चयन उसने किया हो या नहीं। 11 मार्च को एक मामले की सुनवाई करते हुए उच्चतम न्यायालय ने यह व्यवस्था दी। शीर्ष अदालत ने कहा कि समाचार पत्र में किसी मिथ्या खबर के प्रकाशन को लेकर दायर दीवानी या फौजदारी मामले में संपादक ही जिम्मेदार होगा।

न्यायमूर्ति चंद्रमौलि कुमार प्रसाद और न्यायमूर्ति वी जी गौडा की खंडपीठ ने कहा कि संपादक ही प्रकाशित होने वाली खबरों का चयन करता है और वह इस आधार पर अदालती कार्रवाई से छूट नहीं पा सकता है कि कथित आहत करने वाला समाचार उसकी अनुमति के बगैर ही प्रकाशित हुआ था। न्यायाधीशों ने कहा, ''प्रेस और पुस्तक पंजीकरण कानून की व्यवस्था से यह स्पष्ट है कि संपादक ही समाचार पत्र में प्रकाशित होने वाली सामग्री के चयन को नियंत्रित करता है। यही नहीं, समाचार पत्र की प्रत्येक प्रति पर इसके मालिक और संपादक के नाम होना जरूरी है और एक बार जब उस पर संपादक का नाम आ गया है तो फिर किसी भी दीवानी और फौजदारी के मामले में उसे ही जिम्मेदार माना जाएगा।'' न्यायालय ने गुजराती दैनिक समाचार पत्र 'संदेश' के संपादक की दलील खारिज करते हुए यह व्यवस्था दी। संपादक का तर्क था कि चूंकि अपमानजनक समाचार को प्रकाशित करने का फैसला स्थानीय संपादक ने लिया था, इसलिए उनके खिलाफ चल रही सुनवाई को निरस्त किया जाए। उनकी इस दलील पर अदालत ने कहा, ''एक खबर किसी भी व्यक्ति विशेष के लिए विनाश का दिन लाने की क्षमता रखती है। संपादक ही प्रकाशित होने वाली सामग्री के चयन को नियंत्रित करता है। इसलिए उसे चयन पर ध्यानपूर्वक निगाह रखनी होगी। मौजूदा व्यवस्था में संपादक के इतर किसी अन्य के द्वारा ऐसे लेख का संपादन या चयन नहीं किया जा सकता। संपादकों को ही समाचार पत्र में प्रकाशित प्रत्येक सामग्री की जिम्मेदारी लेनी होगी और प्रकाशित सामग्री की शुद्धता बरकरार रखनी होगी।'' न्यायालय ने वडोदरा के तत्कालीन एक्जीक्यूटिव मजिस्ट्रेट की अपील पर यह आदेश दिया। इस मजिस्ट्रेट ने संपादक के खिलाफ मामले को रद्द करने के गुजरात उच्च न्यायालय के फैसले को चुनौती दी थी।

मजिस्ट्रेट ने 1999 में उसके 'डाक्टर की पत्नी से अवैध रिश्तों' के बारे में प्रकाशित कथित मिथ्या खबर के बारे में इस दैनिक के संपादक और स्थानीय संपादक के खिलाफ शिकायत की थी। संपादक ने इस मामले में उच्च न्यायालय में याचिका दायर की थी। उच्च न्यायालय ने संपादक के खिलाफ मामला निरस्त कर दिया था। लेकिन उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय का आदेश निरस्त कर दिया। ■

इंदौर में स्थापित होगा शोध केन्द्र

पत्रकारिता का हब बन चुके मध्य प्रदेश में अब राष्ट्रीय स्तर के शोध केंद्र की स्थापना भी होगी। पिछले दिनों इंदौर में आयोजित 'सार्क देशों' के भाषाई पत्रकारिता महोत्सव के समापन अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में बोलते हुए राज्य के गृहमंत्री उमाशंकर गुप्ता ने यह घोषणा की। मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराजसिंह चौहान ने इस शोध केंद्र की स्थापना के लिए उचित दिशानिर्देश जारी कर दिए हैं। गुप्ता ने कहा कि यह प्रसन्नता का विषय है कि इंदौर प्रेस क्लब शोध जैसे गंभीर कार्य के लिए प्रयासरत है। पिछले दिनों इंदौर प्रेस क्लब ने भोपाल आकर राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन भी किया था। इस संगोष्ठी में मुख्यमंत्री और जनसंपर्क मंत्री उपस्थित थे। उन्होंने केंद्र की स्थापना के लिए जनसंपर्क विभाग के माध्यम से उचित दिशा–निर्देश जारी किए हैं। भविष्य में भी इंदौर प्रेस क्लब केंद्र के लिए जो भी प्रस्ताव देगा उस पर राज्य सरकार हरसंभव सहायता करेगी।

गृहमंत्री ने कहा कि इंदौर प्रेस क्लब का नाम अब वैश्विक पटल पर अंकित हो गया है। वैसे भी इंदौर प्रेस क्लब का नाम पूरे देश में गर्व के साथ लिया जाता है। इंदौर ने पत्रकारिता जगत को कई मूर्धन्य संपादक दिए हैं, जिन्होंने इंदौर का नाम देश ही नहीं विदेशों में भी रोशन किया है। इंदौर की पत्रकारिता की धाक आज पूरे देश में है। इस कार्यकम में वरिष्ठ पत्रकार अभय छजलानी भी मौजूद थे, जिन्होंने प्रिंट मीडिया को अपने तेवर और सामग्री में बदलाव करने की जरूरत बताई। अभय छजलानी ने कहा कि तत्काल जानकारी देने का काम इलैक्ट्रानिक मीडिया कर रहा है। ऐसे में प्रिंट मीडिया को अपनी रचनात्मकता बढ़ानी चाहिए। इस मौके पर अभय छजलानी इंदौर की पत्रकार विरासत को याद करना नहीं भूले। छजलानी ने कहा कि इंदौर ने देश को कई पत्रकार दिए हैं और पत्रकारों के निर्माण का प्रयास सतत जारी रहना चाहिए। ■

अच्छे शीर्षक के लिए पहचानें खबरों का चरित्र : अच्युतानंद मिश्र

समाचारों की दुनिया में शीर्षकों की भूमिका असंदिग्ध रुप से महत्वपूर्ण है। प्रिंट मीडिया में पत्रकार एवं समाचार पत्र को पहचान शीर्षकों के जरिए ही मिलती है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए प्रेरणा में पिछले दिनों प्रशिक्षु पत्रकारों हेतु एक कार्यशाला का आयोजन किया गया।

कार्य्रक्रम के मुख्य अतिथि के तौर पर उपस्थित माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति अच्युतानन्द मिश्र ने बताया कि शीर्षक को इंट्रो के आधार पर तय करते हैं, शीर्षक लिखते समय हमें खबर का चरित्र पता होना बहुत जरूरी है। शीर्षक में आक्रामक, अभद्र शब्दों का प्रयोग नहीं होना चाहिए और शीर्षक छोटा, आकर्षक, प्रभावी एवं संतुलित होना चाहिए। मिश्र ने बताया कि शीर्षक से ही पाठक तय करता है कि उसे समाचार पढ़ना है या नहीं।

दो दशक पूर्व शीर्षक लेखन में सनसनीखेज शब्दावली का प्रयोग नहीं किया जाता था, परंतु आज धडल्ले से हो रहा है। आज के समय में व्यावसायिक दृष्टि से शीर्षक बहुत ही महत्वपूर्ण हिस्सा है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया तो शीर्षक पर ही चलती है। प्रत्येक पृष्ठ का शीर्षक अलग रूप से लिखा जाता है जैसे राजनीतिक पृष्ठ का अलग, खेल पृष्ठ का अलग, आर्थिक का अलग और फिल्मी पृष्ठ का अलग। पहले शीर्षक लिखने का काम सह–संपादक का होता था, परंतु आज कल तो रिपोर्टर स्वयं ही शीर्षक लगा देते हैं। हालांकि समाचार लाना, लिखना, व शीर्षक देना एक ही प्रक्रिया के हिस्से हैं।

अंत में उन्होंने कहा कि समाचार पत्र में लोगों की विश्वसनीयता कम हो रही है जो कि लोकतंत्र व समाज के लिए संकट का विषय है। जनता समाचार पत्रों की खबरों को रंगा–पुता कहने लगी है, जबकि पहले के लोग समाचार पत्र में छपी खबर को 'पत्थर की लकीर' मानते थे। हमारे सामने खबरों की विश्वसनीयता बढ़ाने की बहुत बड़ी चुनौती है।

कार्यक्रम के अध्यक्ष व वरिष्ठ पत्रकार जगदीश उपासने ने कहा कि पत्रकार को किस प्रकार की खबरों से सरोकार होना चाहिए और समाचार को किस प्रकार से संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। उन्होंने कहा कि शीर्षक नियमों से नहीं बल्कि आपकी क्रियात्मक सोच से निकल कर आता है। उपासने ने अपने अनुभवों के बारे में बताया कि

इससे पूर्व प्रेरणा संस्थान के निदेशक श्री आशुतोष ने कहा कि प्रभावी शीर्षक लेखन एक ऐसी कला है, जिससे पाठक को समाचार या लेख पढ़ने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। अतः यह कला हमारे अंदर विकसित हो, इस दृष्टि से 'प्रेरणा' में कार्यशाला का आयोजन किया जा रहा है।

इस कार्यशाला में प्रेरणा मीडिया नैपुण्य संस्थान के पदाधिकारी, माखनलाल चतुर्वेदी विश्वविद्यालय, आईएमएस, एडिट वर्क्स और एमिटी के छात्र–छात्राएं व शिक्षक डा. विनीता गुप्ता, रजनी नागपाल सहित अन्य वरिष्ठ पत्रकार उपस्थित थे। ■

खोजी पत्रकारों ने ढूंढा काले धन का पता

पिछले कई वर्षों से देश में काले धन को लेकर बहस चल रही है और स्विट्जरलैंड समेत टैक्स हैवन देशों में जमा काले धन पर श्वेत पत्र लाने की मांग की जाती रही है। इस प्रकार का कोई श्वेत पत्र सरकार तो नहीं ला सकी, लेकिन खोजी पत्रकारों के एक अंतर्राष्ट्रीय समूह ने यह काम कर दिखाया।

विश्व के 38 देशों के पत्रकारों के समूह इंटरनेशनल कंर्सोटियम के 612 भारतीयों के नामों का खुलासा किया है, जिनके खाते ब्रिटिश वर्जिन आइलैंड, सामोआ और कुक आईलैंड में हैं। यह सभी निवेश फेमा और भारतीय रिजर्व बैंक के दिशानिर्देशों का उल्लंघन करते हैं। इन नामों में भारत के प्रमुख उद्योग घरानों के लोगों समेत दो सांसदों के नाम भी हैं, लोकसभा सांसद विवेकानंद गडडम और राज्यसभा सांसद एवं कारोबारी विजय माल्या। सरकार ने भी खोजी पत्रकारों की इस रिपोर्ट का संज्ञान लिया है।

वित्त मंत्री पी चिंदबरम ने कहा कि रिपोर्ट में जिन लोगों के भी नाम सामने आए हैं, उनसे पूछताछ की जाएगी। खोजी पत्रकारों का यह समूह अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर खोजी पत्रकारिता करता है, जिसमें भारत से प्रतिनिधि के तौर पर पीटीआई एवं इंडियन एक्सप्रेस ■